ओ३म्

ऋग्वेद यजुर्वेद

पवमान

(मासिक)

वर्ष : 26 कार्तिक वि॰स॰ 2071 अक्टूबर 2014 अंक : 10

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून-248008

सामवेद अथर्ववेद

वैदिक साधन आश्रम तपोवन सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून के संरक्षक

स्वामी डॉ॰ दिव्यानन्द सरस्वती जी का परिचय

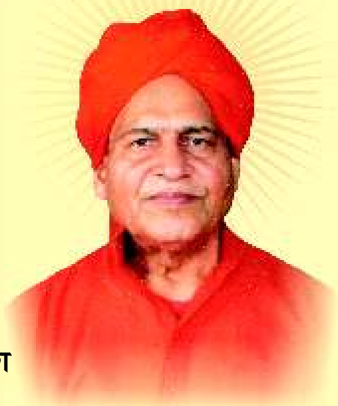

जन्म तिथि : वैशाख कृष्ण 9, बुधवार, संवत् 1996, 12 अप्रैल सन् 1939 ई॰

जन्म स्थली : नगलानरू, दिव्यग्राम, मैनपुरी (उत्तर प्रदेश)

पिता का नाम : श्री नाथूराम आर्य

माता का नाम : श्रीमती द्रोपदी देवी

स्वयं का नाम : योगेन्द्र पुरुषार्थी

बहनें : दो बड़ी

भाई : तीन छोटे

गृहत्याग : दीपावली से पूर्व सन् 1956 ई॰, सिरसागंज, उत्तरप्रदेश

शिक्षा : (क) एम.ए. दर्शन शास्त्र

(ख) पी.एच.डी. (वेदों में योग विद्या)

(ग) डी.लिट.- वेद-दर्शनों में अन्तःकरण का तार्किक विश्लेषण एवं बुद्धिविकास के साधनोपाय।

अध्यापन कार्य : गुरुकुल चित्तौड़गढ़, गुरुकुल झज्जर एवं गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय।

दीक्षा : (क) नैष्ठिक ब्रह्मचर्य दीक्षा- (1) तिथिः श्रावणी सन् 1964 ई॰ (2) स्थानः गुरुकुल झज्जर, रोहतक, हरियाणा (3) गुरुः स्वामी ओमानन्द सरस्वती 'आचार्य'

(ख) सन्यास दीक्षा- (1) तिथिः 12 नवम्बर, सन् 1983 ई॰ (2) स्थानः रामलीला मैदान, नई दिल्ली (3) गुरुः श्रद्धेय स्वामी सच्चिदानन्द सरस्वती योगी

संस्थाओं के नाम- जिनका संचालन व संरक्षण स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती जी द्वारा किया जा रहा है।

(1) पातंजल योगधाम, आर्यनगर, ज्वालापुर, हरिद्वार (2) महर्षि दयानन्द योगधाम, फरीदाबाद (3) वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, देहरादून (4) विरक्त योग मण्डल, योगधाम हरिद्वार (5) यौगिक शोध संस्थान, हरिद्वार (6) अन्तर्राष्ट्रीय वैदिक विरक्त मण्डल (7) गुरुकुल करतारपुर, जालन्धर, पंजाब

ध्यानयोग शिविर : स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती जी अब तक समस्त भारत में लगभग 1000 ध्यानयोग शिविर लगा चुके हैं।

लेखन एवं प्रकाशनः गीत कुसुमाञ्जली (संस्कृत एवं हिन्दी), वेदों में योग-विद्या, योगाचरण एवं शिष्टाचार, योग दर्पण, यज्ञ-योग विद्या, डी.लिट. शोध ग्रन्थ।

vk3e

i oeku

वर्ष-26 अंक-10

अश्विन-कार्तिक 2071 वि० अक्टूबर 2014

सृष्टि संवत् 1,9608,53,115 दयानन्दाब्द :190

❖

-:संरक्षक:-

स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती

❖

-:आद्य सम्पादक:-

स्व० श्री देवदत्त बाली

❖

-:सम्पादक:-

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

मो. : 09336225967

❖

-: अध्यक्ष :-

श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री

मो. : 09810033799

❖

-:सचिव:-

प्रेम प्रकाश शर्मा

मो. : 9412051586

❖

-:सम्पादक मण्डल:-

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

आचार्य आशीष दर्शनाचार्य

मनमोहन कुमार आर्य

पं. उम्मेद सिंह विशारद

❖

-:कार्यालय:-

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,

तपोवन मार्ग, देहरादून-248008

दूरभाष : 0135-2787001

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com

Web-www.vaidicsadhanashramdehradun

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती	3
'राष्ट्रवादी महर्षि दयानन्द सरस्वती'	कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री	4
वैदिक ग्रहस्थ आश्रम		7
ईश्वर सर्वव्यापक है	स्वामी धर्ममुनि परिव्राजक	10
आर्य कर्मवीर सेनानी दयानन्द भारतीय	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	12
मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम और वैदिक धर्म	मनमोहन कुमार आर्य	16
'लौकी पेय : एक अमृत पेय'	डा० विनोदचन्द्र विद्यालंकार	19
'यज्ञाग्नि का चित्त पर प्रभाव'	महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज	22
वृद्धावस्था-ईश्वरीय वरदान अथवा श्राप	हरदयाल कटारिया	26
श्रद्धांजलि-'वैदिक धर्म-दर्शन-संस्कृति के प्रकाण्ड आचार्य पं० राजवीर शास्त्री नहीं रहे'		30
वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून		31

शुल्क: वार्षिक: रु150 : एक प्रति मूल्य : रु15 : पन्द्रह वर्ष हेतु : रु1500

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

lEikndh;

मनुष्य का यह स्वभाव है कि वह सदा एकरस नहीं बना रह सकता है। पर्व और त्यौहारों में उसे नित्य प्रतिदिन के कार्यो से भिन्न कार्य करते हुए हृदयोल्लास मिलता है। माह अक्टूबर में हम विजया दशमी और दीपावली के पर्व मना रहे हैं। इसी माह महर्षि दयानन्द सरस्वती को उनकी पुण्य तिथि पर स्मरण कर रहे हैं। विजयादशमी अत्याचार के विरुद्ध मर्यादा पुरुषोँाम श्रीराम की विजय के उपलक्ष्य में मनाया जाता है। हमारे लिए श्रीराम आदर्श हैं। हम उन्हें भगवान् का अवतार नहीं मानते परन्तु यह अवश्य मानते हैं कि वे आर्य संस्कृति के स्तम्भ रहे हैं। उनके अनेक गुणों में मर्यादाओं के निर्वहन के लिए उन्हें विशेष रूप से जाना जाता है। अथर्ववेद के एक मन्त्र में सात मर्यादाओं का उल्लेख है। मर्यादा के अर्थ हैं-सीमा, नीति का बन्धन, निं”चत प्रथा या व्यवस्थित नियम आदि। मनुष्य के कर्तव्य कर्म अनेक हैं परन्तु उनकी अपनी सीमा होती हैं जिनका उल्लंघन न करते हुए एक आदर्श जीवन बिताना ही मर्यादा पालन करना है। हमारे जीवन में अनेक संघर्ष होते हैं। उस समय यह तय करना आव”यक हो जाता है कि हम कहां तक बढ़ सकते हैं, यही हमारी मर्यादा कहलाती है। हम परिवार में रहते हैं। हमारी माता, पिता, भाई, बहिन आदि के बीच रि”तों की मर्यादाएं होती हैं। इसी प्रकार समाज, ग्राम, राज्य और राष्ट के प्रति हमारे कर्तव्यों की भी अनेक मर्यादाएं होती हैं जिनका निर्वहन करना हमारा परम दायित्व होता है। अथर्ववेद में जो सात मर्यादाएं बतायी गयी हैं। उनमें पहली मर्यादा है-सम्मनस्कता, जहां मन मिले हों वहां श्रेष्ठ साधनों से सिद्धि और सफलता की प्राप्ति होती है। दूसरी मर्यादा है- कभी एक दूसरे से रुष्ट न होना। परस्पर भूलों को क्षमा करते हुए द्वेष मिटाना। तीसरी मर्यादा बड़ों का सम्मान करना है। चौथी मर्यादा है-सतर्कता। हर काम सोच-समझ कर सावधानी के साथ करना चाहिए। पांचवी मर्यादा है-सबकी उन्नति करते हुए अपनी उन्नति करना। 'सर्वे भवन्तु सुखिना सर्वे सन्तु निरामया' की भावना से समस्त संसार का कल्याण हो सकता है। छठी मर्यादा है-उँारदायित्वों का तत्परता साथ निर्वहन करना। सातवीं मर्यादा है-सबके साथ मधुर वचन बोलते हुए अच्छा व्यवहार करना जिससे सौहार्द उत्पन्न करते हुए वातावरण सुखमय बनाया जा सकता है। श्रीराम ने जीवन पर्यन्त उपरोक्त व अन्य सभी प्रकार की मर्यादाओं का पालन किया, इसीलिए वह मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाते हैं।

इस पर्व को मनाने के अनेक कारण बताए जाते हैं जिनमें एक कारण श्री राम का वनवास से अयोध्या में वापस लौटना बताया जाता है। श्री रामचन्द्र ने रावण का वध फाल्गुन या वैशाख में किया था और वे तत्काल ही वापस अयोध्या लौट आये थे। इसलिए श्री रामचन्द्र का अयोध्या में कार्तिक मास में लौटना सम्भव नहीं था, इन तथ्यों को देखते हुए श्री राम के कार्तिक माह में लौटने की कथा काल्पनिक लगती है। दीपावली का पर्व शारदीय नवीन सस्य के शुभागमन के कारण मनाया जाता है। इस अवसर पर नवीन अन्न की लाजा खील से होम किया जाता है और लाजा व मिष्ठान्न वितरण कर हर्षोल्लास से मनाया जाता है। आजकल पटाखे जलाने की कुप्रथा चल पड़ी है जो पर्यावरण और स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त हानिकारक है। हमें चाहिए कि इन कुप्रथाओं से दूर रहते हुए इस त्यौहार को शुद्ध रूप में मनाकर आपस में प्रसन्नता बांटें। 30 अक्तूबर सन् 1883 ई० की काली अमावस्या की रात्रि को करोड़ों लोगों के अज्ञान के अन्धकार को मिटाने वाले वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द ने इस नश्वर शरीर का परित्याग किया था। महापुरुषों की पुण्यतिथियों पर शोकातुर होकर दु:ख प्रकट करने का अवसर नहीं है अपितु उनके आदर्शों को याद कर उन पर चलने का संकल्प लेने का है।

-कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

onke r

ओ३म्

वेद प्राप्त करने वाले चार ऋषि

यस्मिन्नश्वास ऋषभास उक्षणो वशा मेषा अवसृष्टास आहुताः।
कीलालपे सोमपृष्ठाय वेधसे हृदा मतिं जनये जारूमग्नये।।

(ऋग्वेद 10/91/14)

शब्दार्थ– (यस्मिन्) जिस सृष्टि में परमात्मा ने (अश्वासः) अश्व (ऋषभासः) सांड (उक्षणः) बैल (वशाः) गौएं (मेषाः) भेड़–बकरी (अवसृष्टासः) उत्पन्न किये और (आहुताः) मनुष्यों को प्रदान कर दिये वही ईश्वर (अग्नये) अग्नि के लिए (कीलालपे) वायु के लिए (वेधसे) आदित्य के लिए (सोमपृष्ठाय) अंङ्गिरा के लिए (हृदा) उनके हृदय द्वारा (चारूम्) सुन्दर (मतिम्) वेदज्ञान (जनये) प्रकट करता है।

भावार्थ– सृष्टि के आदि में परमात्मा ने घोड़े, बैल, गौएं और भेड़–बकरी आदि नाना पशुओं को उत्पन्न किया और इन सबको मनुष्य के उपयोग के लिए–गौ आदि का दूध पीने के लिए, घोड़े पर सवारी करने के लिए, बैल से भूमि जोतने और भार उठाने के लिए, मनुष्य को प्रदान कर दिया।

ईश्वर ने मनुष्य के ज्ञान के लिए आदि सृष्टि से ही चार ऋषियों द्वारा वेदज्ञान भी मनुष्यों को दिया–

अग्नि के द्वारा ऋग्वेद का ज्ञान दिया।
वायु द्वारा यजुर्वेद का ज्ञान दिया।
आदित्य के द्वारा सामवेद को प्रकट किया।
अंङ्गिरा के द्वारा अथर्ववेद को प्रकट किया।

'राष्ट्रवादी महर्षि दयानन्द सरस्वती'

– कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

काठियावाड़ की मोरवी रियासत में एक छोटे से कस्बे टंकारा में श्री कर्षण द्विवेदी जी के घर एक बालक का जन्म हुआ जिसका नाम मूलशंकर रखा गया था। मूलशंकर ने संस्कृत का अध्ययन किया और वेदों को कण्ठस्थ करने का अभ्यास प्रारम्भ किया। यजुर्वेद उन्हे कण्ठस्थ हो गया और अन्य वेदों के भी अधिकतर मन्त्रों को उन्होंने याद कर लिया। मूलशंकर के जीवन में कुछ ऐसी घटनायें हुई कि वे घर से निकल कर सच्चे शिव की तलाश और मृत्यु से छूटने के उपाय के लिए संन्यास के मार्ग पर चल पड़े। वह एक सच्चे गुरु की तलाश करने लगे और अन्त में उन्हें विरजानन्द के रूप में व्याकरण के प्रकाण्ड विद्वान् मिले जो प्राचीन शास्त्रों में भी बड़ी निष्ठा रखते थे। वे अन्धविश्वास और दकियानूसी प्रथाओं के घोर विरोधी थे। अपने शिष्य को स्वामी विरजानन्द ने न केवल अपने इन गुणों से सुसज्जित किया अपितु उनमें राष्ट्रप्रेम और वेदानुराग की भावना कूटकूट भर दी। योग्य गुरु की अनुकम्पा से दयानन्द एक प्रकाण्ड पण्डित और निपुण तर्कशास्त्री बने। विद्याध्ययन समाप्त होने के बाद स्वामी विरजानन्द ने अपने शिष्य दयानन्द को अपना जीवन देश को समर्पित करते हुए उपकार करने, सत शास्त्रों का उद्धार करने, अविद्या को मिटाने और वैदिक धर्म फैलाने का आदेश दिया। अपने गुरु को दिए हुए वचनों का पालन करते हुए वे अपने कर्तव्य पथ पर चल पड़े। अप्रैल 1867 में कुम्भ के मेले से उन्होंने समाज सुधार का कार्य आरम्भ किया। समाज में व्याप्त पाखण्ड, अन्धविश्वास, कुरीतियों, गुरुडम, आडम्बर, जातिवाद, सतीप्रथा, बालविवाह आदि कुप्रथाओं के विरुद्ध उन्होंने सारे देश के भिन्न-भिन्न स्थानों में घूमघूम कर घोर प्रचार करते हुए आवाज बुलन्द की। अपने विचारों को महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश नामक अपने कालजयी ग्रन्थ में उल्लिखित किया और 10 अपैल 1875 को इसी उद्देश्य से उन्होंने आर्य समाज की स्थापना की। स्वामी दयानन्द की यह एक बड़ी देन है कि भूले हुए वेदों का उन्होंने फिर से परिचय कराया और वेदों के ज्ञान को समस्त भारतवासियों की विद्या का मूल कारण बताया। उन्होंने न केवल वेदों का भाष्य किया अपितु ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका, आर्याभिविनय, संस्कारविधि आदि अनेक ग्रन्थ लिखे। महर्षि के हृदय में मातृभूमि का सर्वोपरि स्थान था और देश प्रेम की भावना उनमें कूटकूट कर भरी हुई थी। अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में वे लिखते हैं कि ''यह आर्यावर्त देश ऐसा है, जिसके सदृश भूगोल में दूसरा देश नहीं है। इसीलिए इस भूमि का नाम सुवर्णभूमि है, क्योंकि यही सुवर्ण आदि रत्नों को उत्पन्न करती हैं।'' महर्षि भारत को सब प्रकार से सम्पन्न देश बनाकर इस का उत्थान करना चाहते थे। उनका लक्ष्य देश को अतीत का गौरव प्राप्त कराकर सुदृढ़ और सुसंस्कृत राष्ट्र बनाना था। राष्ट्र की रक्षा के लिए वे पांच 'स्वकार' अनिवार्य मानते थे।

1- स्वसाहित्य-महर्षि की स्वसाहित्य में अटूट आस्था थी। वे वैदिक वाडमय के अंगभूत ग्रंथों को ही साहित्य का मूलाधार मानते थे। इन्हें वे आर्ष ग्रंथ कहते थे। उनके अनुसार वेद, वेदांग, स्मृति, दर्शन, रामायण और महाभारत हमारे स्वसाहित्य के अनमोल रत्न हैं।

शमशान घाट के गेट पर लिखा था- ''पहुंचना तो मुझ यहीं था, पर पूरा जीवन बीत गया, मुझे यहां तक आते-आते''। मृत्यु को याद रखें।

2– स्वसंस्कृति–संस्कृति शब्द का बहुत व्यापक अर्थ है। संस्कृति मानव के सम्पूर्ण व्यवहार की परिचायक होती है। इसमें हमारी जीवन चर्या और विचार पद्धति में कला, साहित्य, भाषा, धर्म, मनोरंजन और विश्वास आदि प्रतिबिम्बित होते हैं। स्वामी जी प्राचीन आदर्शों के उपासक थे परन्तु वे अंधविश्वासों, रूढ़ियों और पाखण्डों को भारतीय संस्कृति का अंग नही मानते थे। भारतीय संस्कृति के पुरातन मानदण्डों– वर्णव्यवस्था (गुण कर्म स्वभावानुसार), अध्यात्मवाद(एकेश्वरवाद) आश्रम व्यवस्था मोक्ष, अहिंसा अपरिग्रह, यज्ञ, त्याग और योग में उनकी बड़ी आस्था थी।

3– स्वभाषाः– दयानन्द पहले भारतीय विचारक थे जिन्होंने यह अनुभव किया कि भारत को एक राष्ट्रभाषा की आवश्यकता है। इसलिए मातृभाषा गुजराती होते हुए भी उन्होंने सभी पुस्तकें हिन्दी में लिखकर हिन्दी को मातृभाषा के रूप में विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

4– स्वधर्म–महर्षि दयानन्द की स्वधर्म पर अटूट श्रद्धा थी। उनके अनुसार भारत का प्राचीनतम धर्म वैदक धर्म है। यह पूर्णरुप से आस्तिक भाव लिए हुए एकेश्वरवादी है। वैदिक धर्म के अनुसार परमेश्वर किसी मठ मन्दिर गिरजाघर या गुरद्वारे में बन्द नहीं है, अपितु वह सर्वत्र विद्यमान् है। यह मानवतावादी धर्म है।

5– स्वदेश–स्वदेश प्रेम और स्वदेशाभिमान के बिना हम अपनी अस्मिता की रक्षा नहीं कर सकते हैं। राष्ट्रीयता का एक महत्वपूर्ण पहलू स्वशासन का सिद्धान्त माना जाता है। ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने एक कानून, (गवर्नमैंट आफ इन्डिया एक्ट,1858) पास करके भारत के शासन–तन्त्र को ईस्ट इन्डिया कम्पनी से लेकर सीधा अपने अधीन कर लिया था। 1 नवम्बर 1858 को तत्कालीन वायसराय और गवर्नर जनरल लार्ड केनिंग ने दरबार में महारानी का एक घोषणापत्र पढ कर सुनाया जिसमें कहा गया था–''हमारी प्रबल इच्छा है कि अब हम भारत में शान्तिपूर्ण उद्योगों को प्रोत्साहन दें, जनोपयोगी और उन्नति के कार्यो को आगे बढ़ायें और अपनी प्रजा के हित की दृष्टि से कार्य करें। उनकी समृद्धि ही हमारी शक्ति होगी, उनकी सन्तुष्टि ही हमारी सुरक्षा होगी और उनकी कृतज्ञता ही हमारा पुरुस्कार होगा। ''महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने कालजयी ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में कहा कि विदेशियों का राज्य चाहे वह माता–पिता के समान न्याय और दया से युक्त क्यों न हो, कभी हितकारी नहीं हो सकता है। सन् 1874 में लिखे गये ग्रन्थ आर्याभिविनय में महर्षि दयानन्द ने अपनी भावनायें इस प्रकार प्रकट कीं थीं– ''अन्यदेशवासी राजा हमारे देश में कभी न हों तथा हम लोग पराधीन कभी न हों। ''उस समय तक स्वराज्य का विचार किसी भी राजनेता या विद्वान् के दिमाग में नहीं आया था। कांग्रेस के भीष्म पितामह दादाभाई नौरोजी ने सर्वप्रथम 1906 में ''स्वराज्य'' शब्द का उच्चारण किया था और होमरूल आन्दोलन के दिनों में इस शब्द का खुलकर प्रयोग होने लगा था। कांग्रेस के 1916 में लखनऊ में हुए अधिवेशन में लोकमान्य तिलक ने ''स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है'' की घोषणा की और 1928 के लाहौर अधिवेशन में कांग्रेस ने पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करने के लक्ष्य की घोषणा की थी परन्तु महर्षि दयानन्द ने इससे अनेक वर्ष पूर्व ही स्वराज्य के विचार को न केवल प्रचारित किया अपितु अपने अनुयायियों में राष्ट्रप्रेम की भावनायें भर दीं जिसके फलस्वरूप देश के अनेक नौजवान स्वतन्त्रता संग्राम में कूद पड़े। सन 1919 में

जीवन में हर चीज नाशवान है।। यदि सुख मिल रहा है, तो ठीक है।
यदि दु:ख भी आ रहा है, तो वो भी सदा रहने वाला नहीं है।

भारत के स्वाधीनता संग्राम के इतिहास का नया अध्याय आरम्भ हुआ। ब्रिटिश राजनीतिज्ञों द्वारा प्रथम विश्वयुद्ध के अवसर पर लोकतंत्र, राष्ट्रीयता और स्व-भाग्य निर्णय का समर्थन करने वाले सिद्धान्तों की घोषणाएं कीं गई थीं। उनके द्वारा भारतीय जनता को आश्वासन दिया गया था कि युद्ध के समाप्त होते ही वे भारत में उत्तरदायी शासन दिए जाने के सम्बन्ध में कोई महत्वपूर्ण निर्णय लेंगे परन्तु सन 1919 में गवर्नमैंट ऑफ इन्डिया एक्ट द्वारा जिन शासन-सुधारों की घोषणा की गई उनसे जनता संतुष्ट नहीं हुई।

रॉलेट एक्ट के दमनकारी कानून का विरोध करने हेतु स्वामी श्रद्धानन्द ने तार द्वारा अपने सहयोग देने की सहमति प्रदान की थी। दिल्ली सत्याग्रह के संचालन के लिए एक कमीटी गठित की गई। इसके एक तिहाई से अधिक सदस्य आर्य सभासद थे। दिसम्बर सन 1919 में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन अमृतसर में हुआ जिसकी स्वागतकारिणी समिति के अध्यक्ष स्वामी श्रद्धानन्द चुने गए थे। अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने अछूतोद्धार पर बहुत जोर दिया। उनका कहना था कि देश की स्वतन्त्रता के लिए उन बुराइयों को दूर करना आवश्यक है जिनके कारण देश गुलाम बना था। उन्होंने अस्पृश्यता निवारण को कांग्रेस के कार्यक्रम में सम्मिलित कराया। उनका हिन्दी में भाषण देना भी एक क्रांतिकारी कदम था। सितम्बर 1920 में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन कलकत्ता में हुआ जिसमें गांधी जी ने असहयोग आन्दोलन का प्रस्ताव रखा था। इस आन्दोलन ने व्यापक रुप धारण किया। आन्दोलन चलाने के लिए धन की आवश्यकता थी। महात्मा गांधी ने इसके लिए तिलक फण्ड बनाकर धनराशि एकत्र करने की अपील की थी। गुरुकुल कांगड़ी के विद्यार्थी तिलक स्वराज्य फण्ड एकत्र करने के लिए निकल पड़े थे। स्वामी श्रद्धानन्द ने भी इस असहयोग आन्दोलन में उत्साहपूर्वक भाग लिया। महात्मा गांधी के इस असहयोग आन्दोलन को श्रद्धानन्द और अन्य आर्य नेता महर्षि दयानन्द द्वारा प्रदर्शित मार्ग के अनुरुप ही मानते थे इसलिए वे बड़ी संख्या में सम्मिलित हुए और उन्होंने अपनी पूर्ण शक्ति लगा दी थी। भारत को अन्ततोगत्वा 15 अगस्त 1947 को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई । भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में महर्षि दयानन्द के लाखों अनुयायियों ने तन, मन, धन के साथ अपना जीवन तक निछावर कर दिया इनमें लाला लाजपतराय, एम.जी. रानाडे, स्वामी श्रद्धानन्द, भाई परमानन्द, श्यामजी कृष्ण वर्मा, इन्द्र वाचस्पति, भगवतीचरण, भगतसिंह, रामप्रसाद बिस्मल, रोशन सिंह गेंदालाल दीक्षित, मदनलाल धींगड़ा, भाई बालमुकुन्द, मुरलीधर, देशबन्धु गुप्ता आदि प्रमुख हैं। इन समस्त स्वतन्त्रता सेनानियों के बलिदान के लिए राष्ट्र सदा ऋणी रहेगा।

वैवाहिक विज्ञापन

समस्त आर्य बन्धुओं को सूचित किया जाता है कि वे अपने विवाह योग्य पुत्र/पुत्रियों के विवाह हेतु 50 शब्दों तक का विज्ञापन इस पत्रिका में प्रकाशित करवा सकते हैं। विज्ञापन दर रु० 600/- दो अंकों में प्रकाशित किये जाने हेतु है।

सचिव
वैदिक साधन आश्रम, तपोवन
तपोवन मार्ग, देहरादून-248008
दूरभाष : 0135-2787001

काम करने के एक से अधिक विकल्प रखिए। इस पर भी काम न हो, तो न सही। 'हम इसके बिना ही जी लेंगे।' यह एक और विकल्प भी रखिए। ऐसा करने से आप कभी दुखी नहीं होंगे।

वैदिक ग्रहस्थ आश्रम

पिछले अंक में दाम्पत्य जीवन के प्रारम्भ होने के बारे में बताया गया था। अब आगे उनके लिए वेद में दिये गये उपदेशों का वर्णन विद्वान् लेखक ने बहुत सरल भाषा में दिया है। –सम्पादक

–स्व० रामप्रसाद वेदालंकार

उनके लिए आगे वेद में परेश्वर का यह आदेश है, यह उपदेश है, यह निर्देश है कि–

इहैव स्तं मा वियौटं विश्वमायुर्व्यश्नुतम्।
क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वस्तकौ।।(अथर्व)

हे दम्पत्तियों! हे नर–नारियों! हे स्त्री–पुरुषों! (इह एव स्तम्) तुम दोनों विवाह संस्कार में की गई प्रतिज्ञा के अनुसार ही स्वेच्छा से स्वीकृत इस 'गृहस्थाश्रम' में ही वर्तमान रहो।

और इसी में विद्यमान रहते हुए सहज भाव से अपने–अपने कर्तव्यों का पालन करते रहो(मा वियौटम्)

तुम कभी भी परस्पर पृथक मत होओ, अर्थात् कभी भी गृहस्थोचित् कर्तव्यों के पालन से विचलित न होओ। गृहस्थाश्रम में परस्पर प्रेमपूर्वक रहते हुए तुम दोनों ऋतुगामी होकर भी अपने आप को सदा संयम की सुन्दर मर्यादाओं में बान्ध कर रखना, जिससे कि (विश्वम् आयः व्यश्नुतम्) तुम पूर्ण आयु अर्थात्! शतवर्षीय आयु को प्राप्त होओ। इसप्रकार तुम गृहाश्रम में वेदानुसार धर्मपूर्वक जीवन व्यतीत करते हुए पुत्रः (नप्तृभिः क्रीडन्तौ मोदमानौ स्वस्तकौ) अपनी गृहस्थोचित् आयु में पुत्र–पौत्रों के साथ वा पोते नातियों के साथ क्रीड़ा करते हुए, आनन्दोल्लास का अनुभव करते हुए सुन्दर साफ सुथरे घरो में सुख एवं प्रीतिपूर्वक निवास करने वाले होओ।

उपर्युक्त मन्त्र के अनुसार दम्पत्ति को चाहिए, पति–पत्नी को चाहिए कि वे दोनों इस गृहस्थाश्रम में मिलकर रहें, कभी पृथक न हों। विवाह के शुभ अवसर पर जो–जो भी प्रतिज्ञायें की हो, उनके अनुसार दोनों अपने–अपने कर्तव्यों का भली–भांति पालन करें। सच्चे जीवन साथी के रूप में दोनों परस्पर एक दूसरे के कार्य में रुचि (Interest) लें। दोनों में से प्रत्येक एक–दूसरे को अपने से भी बढ़कर स्नेह दे, सुख दे। पति को चाहिए कि वह पत्नी का पालन–पोषण, रक्षण–संरक्षण के अतिरिक्त भी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इतना स्नेह दे, इतना मान–सम्मान दे कि उसके लिए उस विषय में अपना पिछला पितृकुल किसी प्रकार के आकर्षण का केन्द्र न रह जाए। हाँ यों अपने पूज्य माता–पिता, भ्राता–भगिनी आदि के प्यार और उपकारों के प्रति कृतज्ञता भाव के कारण उन सब का सहज ही स्मरण हो आवे, या वे उसे स्मरण करें और उन के पास जाना पड़े तो यह पृथक बात है। परन्तु वैसे नारी को अपने पतिकुल में ऐसा स्नेह–सम्मान मिलना चाहिए, ऐसी सहायता सहयोग मिलना चाहिए, ऐसा सुख–सौभाग्य मिलना चाहिए कि वह उसमें तृप्त रहती हुई सदा प्रभु का धन्यवाद ही करती रहे। नारी को भी चाहिए कि वह भी मन, वचन और कर्म से पति की सेवा–शश्रूषा करे, उसका मान–सम्मान करे। कभी भूलकर भी वह पति की अवहेलना न करे, पति का तिरस्कार न करे, पति का अपमान न करे ...।

समय जरूर बदलता है, चाहे अच्छा हो या बुरा। 'अच्छे समय में ऐसा कुछ न करें,' कि बुरे समय में लोग आपका साथ छोड़ दें। ऐसा करने से आप कभी दुःखी नहीं होंगे।

सुमङ्गली प्रतरणी गृहाणां सुशेवा पत्ये श्वशुराय शम्भूः।
स्योना श्वश्र्वै प्रगृहान् विशेमान् (अथर्व)।

हे नारि! तू **(सुमङ्गली, प्रतरणी, गृहाणां सुशेवा)** मंगलमय आचरण करने वाली, दोष और शोक आदि से सदा तर जाने वाली, गृहकार्यों में सदा कुशल एवं तत्पर रहकर सदा सुखयुक्त होकर **(पत्ये श्वसुराय श्वश्र्वै शम्भूः स्योना)** पति, ससुर और सासु के लिये सदा सुख-शान्ति को करती हुई सब प्रकार से उन सब के लिये सुखदायिनी होने के लिये **(इमान् गृहान् प्रविश)** इन घरों में प्रविट हो- प्रवेश कर।

इतना ही नहीं

स्योना भव श्वशुरेभ्यः स्योना पत्ये गृहेभ्यः।
स्योनास्यै सर्वस्यै विशे स्योना पुष्टायैषां भव (अथर्व०)
या दुर्हार्दो युवतयो याश्चेह जरतीरपि।
वर्चो न्वस्यै संदाताथास्तं विपरेतन (अथर्व०)

हे वधू! तू **(श्वशुरेभ्यः स्योना)** सास-ससुर आदि के लिए सुखदायिनी और **(पत्ये गृहेभ्यः स्योना भव)** पति के लिए और गृह के के अन्य सम्बन्धियों के लिए तू सुखदायिनी हो, तथा **(अस्यै सर्वस्यै विशे स्योना)** इस घर की सब प्रजा-सन्तान के लिए सुखदायिनी होती हुई तू **(एषां पुष्टाय स्योना भव)** सब प्रकार से इन सब की देह, मन, बुद्धि आदि को पुष्ट-परिपुष्ट करने वाली बन कर तत्पर हो।

हे नारि! परिवार के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करने में तू दिव्य बन, अर्थात् तू इतनी महान् होकर प्रवृत्त होने वाली बन कि-

(या दुर्हार्दः युवतयः) जो दुष्ट हृदय वाली कुटिल-हृदय वाली युवती स्त्रियां **(च याः इह जरतीः अपि)** और जो इस स्थान में बूढ़ी-वृद्ध-दुष्ट हृदय वाली-कुटिल-हृदय वाली घर-परिवार को बिगाड़ने वाली स्त्रियां हों वा घर में आवें, तो वे भी **(अस्यै नु वर्चः संदत्तः)** इस वधू के उत्तम गुण कर्म स्वभावों के सम्मुख अपनी एक न चलती देख कर इसे शीघ्र ही तेज प्रदान करें, अर्थात् इसे ऐसे ही तेजोमयी दिव्य रहने का आशीर्वाद देवें, **(अथ अस्तं विपरेतन)** और तदन्तर अपने-अपने घर की ओर चली जावें।

उपर्युक्त तीनों मन्त्रों के अनुसार नारी को चाहिए कि वह सदा मंगलमय शुभकार्यों को ही करती रहे-अमंगलमय निकृष्ट कर्मो से सर्वदा कोसों दूर रहने का प्रयास करे।

वह प्रतरणी होकर अपनी ज्ञानमयी उत्तम बुद्धि रूपी शोभन नौका के द्वारा सदा दोष-दुर्गुण-दुर्व्यसनों और उनके परिणाम स्वरूप होने वाले कष्ट-क्लेशों को, ताप-सन्तापों को प्रकृष्ट रूप से तारती रहे। वह इन सब पाप-अपराधों से एवं इन के आधार पर होने वाली आपत्ति-विपत्तियों से तार कर परले पार प्रसन्न मुद्रा में सदा ऐसे खड़ी हुई दिखाई दे रही हो कि अन्यों के लिए सदा वह प्रेरणा का स्रोत बनी रहे।

उसे चाहिए कि वह गृह कार्यो को इतनी तत्पर होकर-तल्लीन होकर ऐसे कुशलता से किया करे कि वह सब के लिए सदा सुशेवा-सुसुखतमा सिद्ध होवे।

वह जब पतिकुल में प्रविष्ट हो तो 'स्योना' बन कर प्रविष्ट हो। उस का प्रयास यह होना चाहिए कि उसकी प्रत्येक चेष्टा से-उसके प्रत्येक क्रिया-कलाप से उस के पति को सुख मिले, शान्ति मिले, आनन्द मिले, फिर उसके पति को ही केवल नहीं, वरन् उस के

किसी व्यक्ति की वर्तमान स्थिति देखकर उसको सदा के लिए वैसा न मान लेना, क्योंकि कहते हैं, समय आने पर कोयला भी हीरा बन जाता है।

सास-ससुर को भी सुख मिले, शान्ति मिले। और वह भी ऐसे मिले कि उनके हृदयों में फिर उसके लिए सतत स्नेह एवं आशीर्वाद उमड़ता रहे।

एक परिवार में एक बेटी विवाहित होकर आयी तो उस घर के सास-ससुर आदि आदि सब लोग उससे प्रभावित थे। उनका कहना यह था कि 'हम सब इस देवी के बोलने के ढंग से तथा इसके हृदय से ऐसे प्रभावित हैं कि घर में कितनी भी बड़ी से बड़ी हानि इसके हाथों से क्यों न हो जाए, हमारा मन ही नहीं करता कि हम इस पर गुस्सा करें। हां उस ग्लानि के लिए यह जब स्वयं कुछ प्रायश्चित के रूप में भी दु:खी होती है तो हम हंस कर यह कह देते हैं कि बेटी! हुआ क्या, जो तू इतनी दु:खी होती है। टूटने वाली वस्तु ही तो टूटी है, तुझ से नहीं टूटती तो हम से टूट जाती, तो भी तो आखिर यह टूटती ही तो! अत: चिन्ता मत करो-फिकर मत करो, और आ जायेगी। प्रभु ने हमें बहुत कुछ दे रखा है।' हमारे यह सब कहने पर जहां उस को पर्याप्त धीरज मिलता था वहां वह कुछ हलकापन सा भी अनुभव करती थी, और हमारे हृदय में उसके प्रति स्नेह उमड़ता था।

उसके सास-ससुर यह सब कुछ इतना विभोर होकर कहते वा सुनाते थे कि देखते ही बनता था। तब ऐसा प्रतीत होता था जैसे कि उनका रोम-रोम उस देवी के उस परिवार में आगमन पर प्रभु का धन्यवाद कर रहा हो।

(शेष अगले अंक में)

आवश्यक सूचनायें

(1) अब पवमान पत्रिका वेबसाइट www.vaidicsadhanashramdehradun पर भी उपलब्ध है।

(2) योगाचार्य डॉ. विनोद कुमार शर्मा जी के मार्गदर्शन में वैदिक साधन आश्रम तपोवन नालापानी देहरादून द्वारा ग्राम मंगलूवाल में नालापानी खलंगा रोड स्थित तपोभूमि में दिनांक 13 अक्टूबर से 20 अक्टूबर 2014 तक कायाकल्प शिविर का आयोजन किया जा रहा है।

पुरानी कब्ज, ऑव, गैस, मोटापा, जोड़ों के दर्द, शुगर, हृदय रोग, ब्लड प्रैशर, जुकाम, खाँसी, दमा, मिरगी के दौरे, चर्म रोग, महिलाओं की सभी समस्याओं का योग, आसन, प्राणायाम, प्राकृतिक उपचार मिट्टी, पानी, धूप, न शुद्धि क्रियाओं के द्वारा सम्पूर्ण शरीर का काया कल्प किया जायेगा। शिविर में यथाआवश्यक भोजन एवं आवास की उचित व्यवस्था है चिकित्सा शुल्क मात्र 2000 रूपये तथा अनावासीय व्यक्ति शुल्क 1000 रूपए हैं। रोगी व्यक्ति अपने साथ दो तोलिये, एक छोटा, एक बडा गिलास, एक चम्मच एक चादर व एक कम्बल भी साथ लायें। सम्पर्क सूत्र-9319317007, 9412051586, www.arogyadashram.com Email nirogbharat@gmail.com www.vaidicsadhanashramdehradun

मनुष्य का जीवन दो अवसरों पर विशेष बदलता है। एक-जब कोई इसके जीवन में आता है, और दो -जब कोई इसके जीवन से चला जाता है।

ईश्वर सर्व व्यापक है

-स्वामी धर्ममुनि परिव्राजक

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्। । यजु० /।

संसार में जो कुछ भी जड़-चेतन स्वरूप जगत् है वह सब ईश्वर से व्याप्त है।

एक दिन अकबर बादशाह अकबर ने बीरबल से पूछा- बीरबल! आप मुझ से कहते हो कि ईश्वर को याद करो, अच्छा बताओ कि ईश्वर कहां रहता है? कैसे दर्शन हो सकते हैं और वह क्या करता है?

एक साथ तीन प्रश्न पूछ लिए बादशाह ने। बीरबल को तीनों प्रश्न बहुत कठिन लगे, चिन्ता में डूब गया, थोड़ी देर रुक कर बोला- 'महाराज सात दिन का अवकाश दो। आपके सवालों का उत्तर सातवें दिन दूंगा। परन्तु उत्तर देना बड़ा कठिन लगा। छः दिन बीत गये कोई उत्तर नहीं सूझा। सातवें दिन चिन्ता में डूबा बैठा था। तभी उनके छोटे पुत्र ने आकर पूछा- पिताजी आप चिन्ता में क्यों हैं?

बीरबल ने कहा- बेटा! बादशाह ने तीन प्रश्न किये हैं, उनका उत्तर नहीं सूझता प्रश्न भी बता दिए बालक को।

बालक ने कहा- वाह पिताजी! इतनी सी बात की चिन्ता है आपको। इनके उत्तर तो मैं दे सकता हूं। बीरबल ने कहा- अच्छा तो दो उत्तर। बालक ने कहा- आपको नहीं, बादशाह को बताऊँगा, मुझे उनके पास ले चलो।

बीरबल अपने पुत्र को साथ में लेकर बादशाह के पास पहुंचा और बोला- बादशाह साहेब! आपके सवालों के जवाब यह छोटा बालक देगा।

बादशाह ने आश्चर्य से बालक को देखा, बोले -इतने कठिन प्रश्न और उत्तर देगा यह बालक? फिर बोले- अच्छा बच्चे, बताओ हमारे प्रश्नों का उत्तर क्या है?

बालक ने कहा- बादशाह! तुम भारत में नये आये हो, भारत की संस्कृति को जानते नहीं। भारत की संस्कृति यह है कि जब कोई आदमी मिलने आता है तो पहले उसे खिला-पिलाकर उसका सत्कार करो। बाद में उससे बात करो। एकदम से पूछने का रिवाज नहीं है।

बादशाह ने झेंपकर कहा- अच्छा बोलो, तुम क्या खाओगे?

बच्चे ने कहा-मैं तो छोटा-सा बालक हूं। मुझे तो दूध अच्छा लगता है। बादशाह ने कटोरे में दूध मंगवाया। दूध आ गया। बच्चे को देकर कहा-पियो बच्चे!

बालक ने कटोरे को हाथ में लेकर उसके अन्दर झांका, इधर-उधर से उसको देखा, फिर अंगुली डालकर उसमें कोई वस्तु खोजने लगा।

बादशाह ने कहा-यह क्या करते हो बच्चे? दूध को पीते क्यों नहीं?

बच्चे ने कहा-बादशाह, मैंने सुना है कि दूध में मक्खन होता है, परन्तु इस दूध में तो मक्खन दिखाई नहीं देता। बादशाह ने हंसकर कहा-तुम अभी बच्चे हो! अरे, मक्खन इसके अन्दर अवश्य है, उसे देखना है तो दूध में दही डालकर जमाना पड़ता है। जम जाने पर इसे मथनी से मथना पड़ता है। बिलोना पड़ता है। जब बहुत जोर से शक्ति लगाकर बिलोया जाता, तब मक्खन ऊपर आता है।

अनंत धन को कोई नहीं प्राप्त कर सकता। इसलिए अनंत धन को कमाने में, अपना छोटा सा-सीमित जीवन, नष्ट न करें। वस्तुतः आपकी ऐसी इच्छाएं कभी पूरी नहीं होंगी।

बच्चे ने कहा– सुनो बादशाह! तुम्हारे पहले दो सवालों का जवाब यही है:–

ज्यों दूध मांही मक्खन है, ज्यों चकमक में आग।
तेरा प्रभु तुझ में बसे जाग सके तो जाग।

ईश्वर सर्व व्यापक है। इस संसार के कण–कण में रहता है वह, परन्तु उसके दर्शन तब होते हैं, जब मन को ओम् के जाप का दही बनाकर जमाया जाता है। फिर धारणा, ध्यान और समाधि की मथनी से बिलोया जाता है। तब भक्त अपने हृदय में भगवान् को अपने समक्ष देखता है, स्पष्ट रूप से देखता है। प्रभु के दर्शन निश्चित् रूप से होते हैं।

जिस तरह अग्नि का शोला, हर संग में मौजूद है।
उस तरह परमात्मा हर रंग में मौजूद है
हर जगह मौजूद है पर दृष्टि में आता नहीं।
योग साधन के बिना कोई उसे पाता नहीं
ढूंढिये चित की गुफा में ध्यान का दीपक जला।
रस सने की देर है फिर मूक मुंह हो जायेगा

संस्कृत कवि ने भी लिखा है:–

तिले तैलं गवि क्षीरं, काठे पावक मन्ततः।
एवं धीरो विजानीयाद्, उपाय चास्य सिद्धये।।

तिलों में तेल, गाय में दूध, काठ में अग्नि विद्यमान है परन्तु धीर पुरुष ही जानता है और उपायों से प्राप्त करता है।

बादशाह ने कहा–वाह रे बालक! मेरे दो प्रश्नों का उत्तर दे दिया तुमने। मेरा सन्देह दूर हो गया। अब बताओ ईश्वर क्या करता है?

बच्चे ने कहा–यह बात गुरु बनकर पूछते हो या शिष्य बनकर।

बादशाह ने कहा– गुरु बनकर कोई नहीं पूछता, मैं तो शिष्य बनकर पूछता हूं।

बच्चे ने कहा–विचित्र शिष्य हो तुम! गुरु नीचे पृथ्वी पर खड़ा है और शिष्य तख्त पर बैठा है।

बादशाह लज्जित होकर जल्दी से नीचे उतर गया और बच्चे को तख्त पर बैठा दिया। हाथ जोड़कर बादशाह बोला–गुरुदेव, अब बताओ, ईश्वर क्या करता है?

बच्चे ने हंसकर कहा–बस यही करता है, ऊपर वाले को नीचे और नीचे वाले को ऊपर।

अजब मालिक तेरी कुदरत, न कोई भेद पाता है।

शहन्शाह को गदा करके गदा को शाह बनाता है

और भी

खुदा देता है जिनको ऐसे, उनको गम भी होते हैं।
जहां बजते हैं नकारे वहां मातम भी होते है?

(वैदिक सूक्तियों पर दृष्टान्त पुस्तक से साभार)

सूचना

आँखों का निःशुल्क ऑप्रेशन

वैदिक साधनआश्रम तपोवन नालापानी देहरादून के अध्यक्ष श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री जी द्वारा वांछित व्यक्तियों के कैटरैक्ट के आपरेशन निर्मल आई इन्स्टीट्यूट ऋषिकेश में कराये जा रहे हैं। जो व्यक्ति नेत्र रोग से पीड़ित हैं और जिनका कैटरैक्ट का आपरेशन धनाभाव के कारण नहीं हो पा रहा है वह आश्रम के दूरभाष न. 0135–2787001 पर वार्ता करके अपना रजिस्ट्रेशन करवा लें ताकि उपयुक्त दिवस पर आपका कैटरैक्ट का आपरेशन निःशुल्क कराया जा सके। अधिक जानकारी के लिए आश्रम के सचिव से मो. 09412051586 पर सम्पर्क कर सकते हैं।

बहुत धन कमा भी लिया, तो उसको खर्च करने के लिए 'बहुत लम्बा' जीवन भी तो चाहिए। इतना लम्बा जीवन है नहीं, तो बहुत अधिक धन कमाने में क्यों व्यर्थ परिश्रम करें?

आर्य कर्मवीर सेनानी जयानन्द भारतीय

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

वर्तमान उत्तराखण्ड के पौड़ी जनपद के अरकंडाई (धार की) नामक गांव में श्री छविलाल और श्रीमती रैबेली के एक किसान परिवार में 19 अक्टूर, सन् 1881 को एक बालक का जन्म हुआ था जिसका प्यार का घरेलू नाम जेबी रखा गया था जो बाद में इस जीवन गाथा के नायक जयानन्द भारतीय कहलाये। पारिवारिक पृष्ठभूमि अत्यन्त साधारण होने के कारण उनकी कोई औपचारिक शिक्षा नहीं हो पायी और किसी प्रकार वे केवल अक्षर ज्ञान ही प्राप्त कर सके थे। युवा होने पर वे खेती बाड़ी में रुचि लेने लगे और साथ ही जागरी (गीत व संगीत के द्वारा देवी-देवताओं को प्रसन्न करने का पेशा) का काम सीख कर उसमें दक्ष हो गये। युवा अवस्था में इनका अनमेल विवाह होने के कारण पत्नी से शीघ्र ही सम्बन्ध विच्छेद हो गया और पुन: विवाह करने पर इनकी धर्म पत्नी एक कन्या को जन्म देकर कुछ वर्षो के बाद चल बसीं। अब इन्होंने कभी विवाह न करने का संकल्प लिया और अपने पिता से अनुमति लेकर नैनीतल, देहरादून और मसूरी आदि स्थानों पर रोजगार की तलाश में गये। इनके द्वारा अंग्रेजों की नौकरी भी की गई जिसके दौरान इन्होंने साफ-सफाई, उचित कार्य-व्यवहार आदि गुण सीखे। यहीं इन्होंने लिखने-पढ़ने की अच्छी आदतें सीखीं और आर्य समाज के सम्पर्क में आए। वहां पर एक आर्य सज्जन श्री टीकाराम कुकरेती ने इन्हें महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित कालजयी ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश यह कहते हुए दिया कि सबसे पहले इसका तृतीय अध्याय पढ़ें और आगे के अध्याय बाद में पढ़ें। श्री भारतीय ने ऐसा ही किया। सत्यार्थप्रकाश के तीव्र प्रकाश ने इन पर ऐसा प्रभाव डाला कि इनके जीवन की धारा ही बदल गई। जहां पहले वे देवी-देवताओं के झूठे आडम्बर के मकड़ जाल में फंसें थे अब इससे उन्हें घोर घृणा हो गई क्योंकि सच्चे परम पिता परमेश्वर से उनका परिचय हो चुका था। जन्मना जाति-पांति के आडम्बर से भी वह भली प्रकार अवगत हो चुके थे। वे अब समझ चुके थे कि पढ़ने-लिखने, विकास करने और समानता का अधिकार मनुष्य मात्र को है। वे सन् 1911 में गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार जाकर महात्मा मुंशीराम से मिले। उनसे उन्होंने यज्ञोपवीत, आर्यसमाज और श्रेष्ठ कर्मो के बारे में विस्तार से ज्ञान प्राप्त किया। महात्मा मुंशीराम ने 10, जुलाई 1911 को गुरुकुल के आचार्य श्री रामदेव से उनका यज्ञोपवीत करवाया और उनका शुद्ध नाम जयानन्द भारतीय रखा गया। वे गुरुकुल में रहकर अध्ययन करना चाहते थे परन्तु उनकी बड़ी उम्र के कारण यह सम्भव नहीं था, इसलिए मन मसोस कर वह गुरुकुल से विदा हुए। महात्मा मुंशीराम के उपदेशों से प्रभावित होकर उन्होंने दुर्गुण और दुर्व्यसनों को छोड़ने और शेष जीवन आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार, दीन-दलितों की सेवा और समाज के उत्थान के लिए अर्पित करने का संकल्प लिया। उस दौरान पर्वतीय क्षेत्र में कृषि योग्य भूमि बहुत कम होने, उसमें ढलान के कारण प्रत्येक वर्ष मिट्टी व उपज के लिए लाभकारी तत्वों के बह जाने के कारण बहुत कम अन्न पैदा होता था जिससे सभी निवासियों की आर्थिक स्थिति कमजोर थी परन्तु शिल्पकला में निपुण लोगों के पास भूमिहीन होने या केवल रहने योग्य ही भूमि उपलब्ध होने के कारण विपन्नता अधिक थी और वे अपने जीवन निर्वाह के लिए अन्य तथाकथित उच्च वर्णो के लोगों पर निर्भर रहते थे जो न केवल उनका आर्थिक और सामाजिक

उस धन को कमाने का कोई अर्थ नहीं, जिसको भोगने के लिए आपके पास समय ही नहीं। थोड़ा कमाओं सुखी रहो।

शोषण करते थे अपितु उन्हें अपना दास समझते हुए हेय दृष्टि से देखते थे। आर्यसमाज के पारस पत्थर के स्पर्श से श्री भारती का जीवन स्वर्णमय हो गया। अब वह किसी भी प्रकार के तिरस्कार को न स्वयं सहने को तैयार थे और न अपने अन्य दलित, दीन, दु:खी बन्धुओं को ही तिरस्कारित व प्रताड़ित हुआ देख सकते थे। उनके मन में जो चिनगारी उठी थी वह धीरे-धीरे पूरे गढ़वाल क्षेत्र में फैल गई। जहां उनका यह प्रचार व सेवा कार्य जोर-शोर से चल रहा था, वहीं आजीविका का कोई साधन न होने के कारण आर्थिक विपन्नता सदैव बनी रहती थी, इसलिए वे प्रथम विश्व युद्ध के अवसर पर फौज में भर्ती होकर सेवा का अवसर नहीं गंवा सकते थे। वे 10 मार्च, 1918 को सेना में भर्ती हो गये परन्तु अपने साथ सत्यार्थप्रकाश और संस्कार विधि जो उनके जीवन के अभिन्न अंग थे को भी ले गए। रात्रि के समय वे सैनिकों के लिए सत्यार्थप्रकाश का पाठ किया करते थे। जर्मनी में एक हिन्दू सैनिक की मृत्यु हो जाने पर उन्होंने अपने अधिकारियों की अनुमति लेकर उसकी अन्त्येष्टि वैदिक रीति से वेद मन्त्रों का पाठ करते हुए की थी। उनके विचारों का साथी सैनिकों पर बहुत प्रभाव पड़ा और उनमें से एक सैनिक श्री रघुवर दयाल ने तो सेवा निवृत्ति के बाद आर्य समाज की बहुत सेवा भी की थी। माता-पिता के अत्यन्त आग्रह के आगे उन्हें अन्त में झुकना पड़ा और वे तीसरी बार विवाह के बन्धन में बंध गये। उनका यह विवाह सफल रहा और उनके तीन पुत्र हुए। इस प्रकार एक पुत्री और तीन पुत्रों के वे पिता बने। पुत्री शान्ति और एक पुत्र श्री परमानन्द को उन्होंने गुरुकुल में शिक्षा दिलाई थी। उनका एक पुत्र सेना में भी नियुक्त हुआ था। श्री भारतीय ने सेना से सेवा निवृत्ति के बाद भी आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार और समाज के दु:खी वर्ग की सेवा व सुधार का कार्य जारी रखा। उनके गांव के पौराणिक लोगों को उनके आत्म जागरण से किये जाने वाले यह सब काम पसन्द नहीं थे। उन्हें मार्ग से भटकाने के लिए एक चाल चली गई और गांव में देवपूजा का कार्यक्रम रखा गया। उस क्षेत्र के लोगों की यह मान्यता अब भी है कि देवपूजा का विरोध करने वाले और इसमें सम्मिलित न होकर इसकी अवमानना करने वालों का घोर अनिष्ट होता हैं। उन्हें भी कई धमकियां व प्रताड़नाएं दी गयीं परन्तु देवपूजा और उसमें बकरों व भेड़ों की बलि दिये जाने का श्री भारतीय ने घोर विरोध किया। उस समय इस इलाके में दुगड्डा एक व्यायसायिक मण्डी के रूप में व्यस्त स्थान था जहां तिब्बत से ढाकरी व्यापारी चोर, फरण आदि मसाले लाते थे और यहां से नमक, गुड़, तम्बाकू आदि ले जाते थे। श्री भारतीय जी ने मुख्यत: दुगड्डा को अपना कार्य क्षेत्र बनाया परन्तु वे दूर-दूर तक पर्वतीय क्षेत्रों में दलित- दुर्बलों की उन्नति और आर्य सिद्धान्तों की ज्योति जलाने के लिए भ्रमण करते रहते थे। इन यात्राओं में यज्ञोपवीत के महत्व पर अत्यधिक बल देते थे। उनके इस प्रचार कार्य विशेष रूप से दलितों को जनेऊ पहना कर, पवित्र कर द्विज बनाने से उच्च वर्ण के मतान्ध लोगों के मन में उनके प्रति रोष व प्रतिकार की भावनाएं भड़क उठीं और उन्हें घाटी में धकेल कर या जहर देकर मारने के कई प्रयास हुए परन्तु दयानन्द का यह वीर सेनानी कर्तव्य मार्ग पर डटा रहा। अन्य देश भक्तों की तरह उनमें भें भी देश प्रेम की भावना कूट-कूट कर भरी थी। वे राष्ट्रीय कांग्रेस में सक्रिय सदस्य के रूप में आजादी के आन्दोलन में कूद पड़े। दुगड्डा में 30 मई, 1930 सर्व प्रथम राजनीतिक सम्मेलन हुआ था। शराब की भट्टियों पर पिकेटिंग की गई और भूमि-बन्दोबस्त में किये जा रहे अत्याचारों का घोर विरोध किया गया। इसी वर्ष 28 अगस्त को भारतीय जी ने राजकीय विद्यालय जहरीखाल के भवन पर तिरंगा झण्डा फहराया और अपने भाषणों से छात्रों

मृत्यु के समय आपके बैंक में जो धन जमा है, यह उस अनावश्यक परिश्रम का परिणाम है, जो आपको नहीं करना चाहिए था। न खाया और न दान दिया।

को विरोध के लिए प्रेरित किया था। 1 फरवरी, सन 1932 को कांग्रेस के गैर कानूनी घोषित किये जाने के कारण उत्पन्न परिस्थितियों को देखते हुए धारा 144 लगाई गई थी। भारतीय जी द्वारा इसका उल्लंघन करने पर उन्हें पकड़ कर जेल में बन्द कर दिया और उन्हें छः माह के कठोर कारावास की सजा दी गई थी। सन् 1932 में ही अंग्रेज गवर्नर सर विलियम मैलकम हैली का पौड़ी में स्वागत किया जाना था। कांग्रेस के गैर कानूनी घोषित हो जाने से उनका विरोध करने का किसी में साहस न था परन्तु इस कथा के नायक के मन में तो कुछ और ही भावनाएं हिलोरे ले रहीं थीं। 6 सितम्बर, सन् 1932 को पौड़ी में गवर्नर को एक अभिनन्दन पत्र भेंट किया जाना था। इन पंक्तियों के लेखक ने अनेक बार इस वृतान्त को सुना था। भारतीय जी कुछ दिन पूर्व ही जेल से छूट कर लौटे थे। वे घटना से एक दिन पूर्व रात के समय लुकते-छिपते अपने मित्र श्री मायाराम आर्य जो कलेक्ट्रेट पौड़ी में लिपिक थे और तारा लौज पौड़ी में निवास करते थे, के घर पहुंच गये। वे अकसर जब भी पौड़ी आते तो उनके निवास पर ही ठहरते थे जहां श्री बलदेव सिहं आर्य आदि अनेक स्वतन्त्रता सेनानी आकर ठहरते व देश की आजादी के विषय में आपस में विचार-विमर्श किया करते थे। श्री आर्य एक निष्ठावान् आर्यसमाजी व देशभक्त थे जो आर्यसमाज व राष्ट्र के लिए समर्पित थे परन्तु अंग्रेजों की सरकार के अधीन सेवामें रहने के कारण खुलकर सामने नहीं आ सकते थे। रात्रि को वहां पर विश्राम करने के उपरान्त सुबह होते ही श्री भारतीय चले गये थे परन्तु जाते हुए एक काली छत्री को ले जाना नहीं भूले थे। उस छतरी के अन्दर ही उन्होंने एक झण्डा छिपा रखा था। (स्व० श्री शान्तिप्रकाश 'प्रेम' प्रभाकर ने उनकी जीवनी में कोतवाल सिहं नेगी के घर उनका ठहरना लिखा है। ऐसा लगता है कि श्री आर्य के सरकारी सेवक होने के कारण लोगों से उनके घर रहने का तथ्य श्री भारती ने छिपाया होगा) 6 सितम्बर 1932 को भारतीय जी आस्तीन के अन्दर तिरंगा छिपाकर ले गये थे और जैसे ही गवर्नर अभिनन्दन पत्र का धन्यवाद देने हेतु खड़ा हुआ, भारतीय जी ने झण्डा निकाल कर उसे डण्डे पर लगाते हुए हाथ में ऊंचा उठा कर हवा में फहराया और ' मैलकम हैली गो बैक '....' भारत माता की जय '.....' अमन सभा मुर्दाबाद ' आदि नारे लगाने लगे। सरकारी सिपाहियों ने उन्हें जकड़ लिया और उनके ऊपर कम्बल या चादर डालकर उनकी आवाज बन्द करने की कोशिश की परन्तु उनके द्वारा नारे लगाना बन्द न हुआ। उन्हें तत्काल थाने में ले जाकर बन्द कर दिया गया। वहां पर उनके लम्बे-लम्बे बालों को खींच कर कई दिन तक उन्हें यातनायें दी गयीं परन्तु उन्होंने यह नहीं बताया कि वे कहां ठहरे थे और इस विद्रोह में उनके साथी कौन-कौन थे। न्यायालय ने इन्हें तीन सौ रुपये अर्थदण्ड करते हुए इस शर्त पर छोड़ने की पेशकश की कि वे राज्य के शुभ-चिन्तक बने रहने की गारन्टी देंगे और एक साल तक पुलिस की निगरानी में जमानत पर रहेंगे परन्तु भारतीय जी ने इन शर्तों पर रिहा होने से इनकार कर दिया, फलतः उन्हें एक वर्ष का कठोर कारावास का दण्ड दिया गया था। भारत छोड़ो आन्दोलन में भी उनकी सक्रिय भूमिका रही और उन पर देशद्रोह का मुकदमा चलाया गया जिसमें उन्हें दो वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड दिया गया। इस प्रकार उनको अप्रैल 1944 तक छः बार जेल भेजा गया और अनेक यातनायें दी गई परन्तु यह वीर सेनानी निरन्तर राष्ट्र सेवा में लगा रहा। श्री भारतीय जी का संक्षिप्त जीवन परिचय देते समय उनके द्वारा गढ़वाल के शिल्पकारों के डोला-पालकी आन्दोलन में निभाई गई भूमिका का उल्लेख करना आवश्यक है। जैसा कि पूर्व में वर्णित किया जा चुका है, गढ़वाल के तथाकथित उच्च वर्ण के

जिस धन को आप खर्च नहीं करते या कर पाते, वह धन आपका नहीं है।
आपका धन उतना ही है, जो आपने खर्च किया। अधिक धन का लोभ किस काम का?

लोग इन्हें अपना गुलाम समझते थे, न केवल इनको अछूत मानते हुए ऐसा बर्ताव करते बल्कि उन्हें सामान्य मानवीय अधिकार भी देने को तैयार नहीं थे। गढ़वाल आदि पर्वतीय क्षेत्रों में दुर्गम मार्ग होने के कारण सभी जातियों के लोग वर-वधू को डोला-पालकी में ले जाते थे परन्तु शिल्पकारों का ऐसा करना उनको गंवारा न था। जब महर्षि दयानन्द के विचारों से इनमें जागरूकता फैली और इन्होंने भी अपने दूल्हा-दुल्हनों को डोला-पालकी में ले जाना प्रारम्भ किया तो अनेक स्थानों पर अन्य तथाकथित उच्च वर्ण के लोगों ने घोर विरोध और मारपीट की जिसके फलस्वरूप कई गिरफ्तारियां और मुकदमे बाजी हुई। अब ये शिल्पकार लोग जाग उठे थे और झुकने के लिए तैयार नहीं थे इसलिए कई वर्षो तक संघर्ष चलता रहा। इस संघर्ष में श्री भारतीय ने बहुत मुख्य्य भूमिका निभाई थी। वे कई बार महात्मा गांधी, श्री जवाहरलाल नेहरू, महामना मदन मोहन मालवीय और पं० गोबिन्द बल्लभ पन्त से मिले और इस समस्या का निदान करने हेतु अप्रैल, 1946 में एक अभूतपूर्व आर्य सम्मेलन दुगड्डा में कराया। ये सब प्रयास अन्ततोगत्वा सफल हुए और उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा इस दमन को रोकने के लिए डोला-पालकी एक्ट बनाया गया। वे स्वतन्त्रता की प्राप्ति के बाद भी वे आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार और दीन, दु:खियों की सेवा में लगे रहे। जहां उनके अन्य साथियों ने आजादी के बाद मन्त्री आदि पद स्वीकार कर जीवन आराम और सुविधाओं के साथ बिताया, वहीं इस निष्ठावान् आर्य सेनानी ने कोई भी सुविधा लेना स्वीकार नहीं किया। विपन्नता में जीवन बिताते हुए बीमार होकर 9 सितम्बर, 1952 को राष्ट्र भक्त महर्षि दयानन्द और श्रद्धानन्द के इस कर्मवीर सेनानी ने अपनी इहलौकिक जीवन यात्रा पूर्ण की और अनन्त यात्रा पर चल पड़ा। भले ही कई अनाम शहीदों की तरह शासन और प्रशासन की ओर से उन्हें कोई मान्यता नहीं दी गई जबकि देश की आजादी में भाग लेने वाले सामान्य कार्यकर्ताओं के नाम पर भी सड़कों और विश्वविद्यालयों के नाम हैं। इस राष्ट्रसेवक को हम शत-शत नमन करते हैं। वे सदा हमारे हृदयों में अमर रहेंगे।

सुविचार एवं सूक्तियां

मनुष्य को देखकर गाय, बकरी, पक्षी आदि क्यों नहीं डरते ?

बिल्ली को देखते ही चूहा भाग जाता है। सिंह, बाघ आदि की गंध आते ही बैल, हिरण आदि सब भाग जाते हैं परन्तु मनुष्य को देखकर भेड़, बकरी, गाय, घोड़ा, मुर्गी आदि लुकते-छिपते नहीं। इसका कारण यही तो है कि उन्हें पता है कि मनुष्य हिंसक मांसाहारी जन्तु नहीं है। ईश्वर ने इसे शाकाहारी ही बनाया है।

-आर्य समाज के विद्वान डा. हरिश्चन्द्र

सुखी वो नहीं, जिसके पास अधिक धन है। सुखी तो वो है, जिसकी आवश्यकताएं कम हैं।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम और वैदिक धर्म

-मनमोहन कुमार आर्य

वेद और वैदिक धर्म-संस्कृति सारे संसार में सबसे प्राचीन है। सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने जब अमैथुनी सृष्टि कर मनुष्यों को उत्पन्न किया तो जीवात्माओं को मानव शरीर प्रदान करने की ही भांति सब मनुष्यों को धर्म पालन, भोग व अपवर्ग के लिए चार वेद - ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद का ज्ञान भी चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को ईश्वर ने दिया। सृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न सभी स्त्री-पुरूषों ने वैदिक धर्म का पालन करना आरम्भ कर दिया था। समय बीतने के साथ अनेक मनुष्य उत्पन्न होते रहे और वैदिक धर्म का पालन करते हुए धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त होते रहे। इस प्रकार सृष्टि के अब तक व्यतीत लगभग 500 सतयुग, त्रेता, द्वापर व कलियुगों में किसी एक त्रेता युग में चक्रवर्ती राजा दशरथ के सूर्यवंशी कुल में माता कौशल्या से भगवान राम का जन्म चैत्र शुक्ल नवमी को हुआ था। राम चन्द्र जी के जन्म से पूर्व पिता दशरथ ने ऋषि-मुनियों से वेद-मन्त्रों से पुत्रेष्टि यज्ञ कराया था जिससे उनकी तीन रानियों, कौशल्या से श्रीराम, सुमित्रा से लक्ष्मण एवं शत्रुघ्न तथा कैकेयी से भरत का जन्म हुआ था। भगवान राम की शिक्षा-दीक्षा उन दिनों की परिपाटी के अनुसार गुरूकुल प्रणाली से हुई जहां उन्होंने चारों वेदों का अध्ययन करने के साथ ऋषि-मुनियों द्वारा वेदों में से अन्वेषित नाना विषयों यथा राजनीति, धर्म, शस्त्र विद्या, राजा के धर्म व कर्तव्य आदि का विस्तृत ज्ञान प्राप्त किया। श्री रामचन्द्र जी ने गुरूकुल में ऋषियों से न केवल ज्ञान ही प्राप्त किया अपितु जितना ज्ञान अर्जित किया उसे अपने आचरण में लाकर एक ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया जो उनके पूर्व व पश्चात के अन्य क्षत्रियों व गुरूकुल शिक्षित ब्रह्मचारियों में देखने को नहीं मिलता था। ऐसे गुणवान, चरित्रवान तथा ऋषि-मुनियों, आचार्यों, विद्वानों व माता-पिता के आज्ञापालक श्री राम के समान दूसरा व्यक्ति उस समय कौशल देश व सारे संसार में नहीं था। देश, समाज व विश्व का प्रत्येक व्यक्ति उनकी कीर्ति व यश से प्रभावित होकर उनका गुण-गान करने के साथ उन्हें मर्यादा पुरूषोत्तम तथा आदर्श राजा मानने लगा। श्री राम के इन्हीं सब गुणों से प्रभावित होकर महर्षि बाल्मिकी ने उन पर एक महाकाव्य ''रामायण'' का प्रणयन किया जो विश्व साहित्य में आज भी अनुपमेय एवं अद्वितीय ग्रन्थ है। इसे जो भी पढ़ता है वह कृतकृत्य हो जाता है।

बाल्मिकी रामायण का अध्ययन करने पर श्री रामचन्द्रजी के बारे में जो तथ्य सामने आते हैं वह यह कि वह पूर्णतया वैदिक धर्म व संस्कृति के पालक, रक्षक, प्रचारक, उद्धारक होने के साथ एक आदर्श राजा, आदर्श पुत्र, आदर्श पति, आदर्श भाई, आदर्श प्रजा-पालक- सेवक, आदर्श मित्र, आदर्श शिष्य, आदर्श युद्धकर्ता आदि थे। यह सब गुण उनमें अपने माता-पिता व आचार्य- ऋषि-मुनियों की शिक्षा व अपने पूर्व व वर्तमान जन्म के संस्कारों से आये थे। किसी भी पुरूष के जीवन की सार्थकता राम जैसा बनने में ही है। इसका अर्थ है कि वैदिक धर्म व संस्कृति के अनुरूप सभी मानवीय गुणों को अपने आचरण में धारण करने व जीवन को उन गुणों में ढ़ालने में जीवन की सफलता है। यदि हमारा आचरण श्री राम जैसा नहीं है तो इसका अर्थ है कि हमारे जीवन में अपूर्णता है और इसका दूसरा अर्थ यह है कि हमारा जीवन एक सीमा तक तो सफल है परन्तु पूर्ण रूप से सफल नहीं है। यदि हम कोई कार्य करते हैं और हमें उसमें 30 से 50 प्रतिशत तक अंक या सफलता मिले तो जिस प्रकार से यह परिणाम अच्छा नहीं है उसी प्रकार से आजकल के मानवों के जीवन हैं जिन्हें सफल वा सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता। इस असफलता का एक कारण हमने स्वाध्याय, विद्वानों का सान्निध्य व सत्संग, आत्म-चिन्तन, अपने कार्यों व विचारों पर दृष्टिपात करना, सत्य व असत्य का विवेचन, ऊहापोह, अपने कार्यो, आचरण व विचारों की मीमांसा करना छोड़ दिया है। हम विदेशियों व उनके अनुगामी अपने स्वदेशी बन्धुओं की धन प्राप्ति के लिए दौड़ से प्रभावित होकर

मनुष्य के जीवन का निर्माण विचारों से ही होता है। मनुष्य जैसा विचार करता है, वैसा वह बोलता और व्यवहार करता है। इसलिए विचार सदा शुद्ध रखें।

उनका ही अनुकरण करने लगते हैं। यदि आवश्यकता या उससे अधिक धन प्राप्त कर लिया तो हम स्वयं को सफल व्यक्ति मानने लगते हैं। समाज में सर्वत्र यही दृश्य दिखाई देता है। यह ठीक नहीं है परन्तु देश, काल व परिस्थिति ने हमें धर्म, कर्तव्य, सत्य के आचरण से दूर कर दिया है। इससे हमारा जीवन, जिस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए ईश्वर से प्राप्त हुआ था, उसमें हम सभी असफल ही रहते हैं। हम जहां जिस रूप में भी हों, हमें हर स्थिति में वैदिक धर्म व वैदिक शिक्षाओं के अनुरूप अपने जीवन को ढालना है। सभी गुणों से सम्पन्न होने के कारण हम श्री राम को भगवान की उपमा देते हैं। सभी मानवीय श्रेष्ठ गुणों को हम श्री राम चन्द्र जी के जीवन में पाते हैं। भगवान राम जैसा यदि दूसरा उदाहरण हमें भारत व आर्यावर्त्त के इतिहास में ढूंढना हो तो महाभारत में योगेश्वर श्री कृष्ण के रूप में मिलता है। भगवान कृष्ण के बारे में यदि संक्षेप में कुछ कहना हो तो बस इतना कहना ही पर्याप्त है कि वह वेदों व उसकी शिक्षाओं के पालक व रक्षक थे और चरित्र व मर्यादाओं के पालन में अपूर्व व श्रेष्ठ थे। इसी प्रकार से इतिहास में एक नाम और है जो इसी परम्परा में, देश काल व परिस्थिति के अनुसार कुछ भिन्न प्रतीत होता हुआ भी, इसी प्रकार से स्तुत्य, पूज्य, आदरणीय, अनुकरणीय व माननीय है। महर्षि दयानन्द ने श्री रामचन्द्रजी व योगेश्वर कृष्ण के समय की वैदिक धर्म व संस्कृति को अपने युग, सन् 1863 ई. व उसके पश्चात, स्थापित व उसका उद्धार किया जिसका इतना अधिक पतन हो चुका था कि उसे पुनर्जीवित करना कठिन व असम्भव प्रायः हो गया था। चार वेद, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद तो प्रायः लुप्त व अप्राप्त हो चुके थे, उन्हें खोज कर भारत व विश्व के सभी लोगों को प्राप्त कराया। वेदों के मन्त्रों के अर्थ जिसको करने की क्षमता उनके युग में व पूर्व के किसी देशी व विदेशी विद्वान में नहीं थी, वह वेदार्थ का कार्य भी उन्होंने न केवल स्वयं ही किया अपितु हम सबकों करना भी सिखाया। उनके समय में हमें यह नहीं पता था कि वेद किन ग्रन्थों की संज्ञा है, नाम हैं, वह भी उन्होंने अपने अपूर्व विद्या बल से प्रमाण सहित हमें जनायें। उनके समय में वैदिक धर्म पतन व पराभव को प्राप्त होकर विकृत हो चुका था, उसमें नाना प्रकार के अन्धविश्वास, पाखण्ड, कुरीतियां आदि मिल चुकी थीं, जिनसे देश व समाज अन्धकार में गिरकर दुख भोग रहा था, उस गर्त से निकाल कर सच्ची ईश्वर पूजा, माता-पिता-आचार्यों की सेवा व पूजा, विद्वानों का सत्कार, प्राणियों पर दया व करूणा, अंहिसा का प्रचार, योग व यज्ञ का प्रचार, अन्धविश्वासों, पाखण्डों व कुरीतियों का उन्मूलन आदि का कार्य कर, हिन्दू जिसका उज्जवल व पूर्व ऐतिहासकि नाम '''आर्य''' है, जिसका अर्थ श्रेष्ठ मनुष्य है, उसे ऐसा सशक्त व बलशाली बना दिया कि आज यह जाति सारे संसार में आध्यात्मिक दृष्टि से सबसे अधिक बलशाली बनकर खड़ी है। नित्य प्रति इस जाति के निर्धन, भूखे व बेबस लोगों का शोषण, अन्याय व धर्मान्तरण किया जाता था, वह नियन्त्रित हुआ तथा आगे के लिए इसके उत्कर्ष का मार्ग निश्चित हुआ। यह महर्षि दयानन्द, भगवान राम व भगवान कृष्ण की परम्परा में हुए और इन्होंने वही कार्य किया जो कि किसी वेद के अनुयायी व वेदभक्त से उस समय की देश-काल-परिस्थिति के अनुरूप अपेक्षित था। हमें तो लगता है कि ईश्वर स्वयं यह कार्य करवाना चाहते थे तभी उन्होंने महर्षि दयानन्द को इसका पात्र बनाया। भगवान राम, भगवान कृष्ण व भगवान दयानन्द ने अपने जीवन में जो-जो कार्य किये वह समस्त मानव जाति व प्राणि मात्र के हित के कार्य थे। आज यदि भगवान राम व भगवान कृष्ण सशरीर होते, तो स्वामी दयानन्द का समर्थन कर कहते कि हे आर्य सन्तानों, तुम महर्षि दयानन्द को वही सम्मान, सत्कार व पूजा प्रदान करो जो तुम हमें करते हो, क्योंकि हम अलग-अलग भले ही दिखाई दें परन्तु हम भावनात्मक, धर्म-मत-संस्कृति व विचारधारा से एक हैं।

भगवान राम से सम्बन्धित एक और महत्वपूर्ण तथ्य की ओर हम ध्यान दिलाना चाहते हैं और वह यह है कि भगवान राम अपने नित्यकर्मो में पंच-महायज्ञों का अनुष्ठान पूरी निष्ठा से करते थे। पंच-महायज्ञों में प्रथम है ईश्वरोपासना जिसे सन्ध्या भी कहा जाता है। वेदों में प्रातः व सायं ''सन्ध्या'' करने का विधान है। ईश्वर का चिन्तन व सन्ध्या करने से हमें अपनी चेतन आत्मा को बल, ज्ञान, शुभ कार्यो को करने की प्रेरणायें मिलने के साथ सुख-शान्ति की प्रप्ति होती है और इससे उपासक का यश व कीर्ति बढ़ती हैं। इसके साथ भगवान राम अपने जीवन में नित्य-प्रति अग्निहोत्र-देव यज्ञ भी करते

शुद्ध हृदय वाला व्यक्ति ही निश्च्छल मुस्कानवाला हो सकता है, जो उसके शत्रु का भी दिल जीत ले। शुद्ध हृदयवाले होकर, दुनिया का दिल जीत लें।

थे। वह केवल स्वयं ही यज्ञ नहीं करते थे अपितु यज्ञों में तन-मन व धन से सहायता भी करते थे। इतना ही नहीं यदि कोई कहीं यज्ञ में विघ्न डालता था तो उसका पराभव या उसे दण्डित करते थे। यज्ञों में विघ्न डालने वाला यदि कोई राजा हो और समझाने से भी वह समझता नहीं था तो उसका विनाश व दण्ड देकर यज्ञ की रक्षा करते थे। श्री रामचन्द्रजी के जीवन में यज्ञ की रक्षा के जो उदाहरण मिलते हैं, ऐसे उदाहरण वैदिक ऐतिहासिक साहित्य में अन्यत्र दृष्टिगोचर नहीं होते। इसी प्रकार से वह माता-पिता व आचार्यों के एक आदर्श आज्ञा पालक व सेवक थे। उनके माता-पिता व आचार्यों को उनके कार्य व व्यवहार से किसी प्रकार की कोई शिकायत नहीं थी। इस प्रकार से पितृयज्ञ को करने के साथ वह अतिथि यज्ञ व प्राणि यज्ञ भी करते थे। अतिथि, संन्यासी-विद्वान-आचार्य-गुरूजन, सदैव उनसे सन्तुष्ट रहते थे तथा किसी प्राणी को उन्होंने निष्कारण दुःख कभी नहीं दिया। इस प्रकार से भगवान राम पंचमहायज्ञ के नित्य प्रति अनुष्ठानकर्ता थे। इसी पंचमहायज्ञ पद्धति का प्रवर्तन महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आधुनिक काल में किया है जिसका प्रचार-प्रसार आर्य समाज करता है। आर्यात्व की एक परिभाषा ही यह है कि आर्य उसे कहते हैं कि जो प्रतिदिन बिना व्यवधान के पंचमहायज्ञों को करता है।

हमने उपर्युक्त पंक्तियों में देखा कि भगवान राम, भगवान कृष्ण व भगवान दयानन्द वैदिक धर्म के पोषक, रक्षक, सेवक, परिष्कर्ता, संशोधक, प्रशंसक, यशस्वी, व कीर्तिवान युगपुरूष थे। वैदिक धर्म क्या है? यह ईश्वर से उत्पन्न मानव-मात्र व प्राणी-मात्र को सुखी बनाने का ऐसा जीवन-विधान है जिससे सारे विश्व में सुख व शान्ति स्थापित हो सकती है। सारे संसार में दुःख का प्रमुख कारण मत-मतान्तर, अज्ञान व स्वार्थ पर आधारित इसी प्रकार की संस्थायें आदि हैं। भगवान राम वैदिक धर्मी थे। वेदों के प्रति उनमें अगाध श्रद्धा थी। वह वैदिक मर्यादाओं के पालक व रक्षक थे। जब हम कहते हैं कि वह मर्यादा पुरूषोत्तम थे तो इसका अर्थ यही होता है कि वह वैदिक मर्यादाओं के रक्षक, पोषक व पालक थे। वैदिक मर्यादाओं को उन्होंने अपने जीवन में साक्षात् जिया था। ऐसे वेदों के निष्ठावान युग पुरूष भगवान राम के गुणों को जानकर हमें उन गुणों को अपने जीवन में धारण करना है और इसके साथ वेदों को जानकर, उनका अध्ययन कर उनके आदर्शों के अनुरूप अपने जीवन का निर्माण करना है। इस कार्य में महर्षि दयानन्द व उनका साहित्य हमारी सहायता कर सकता है। आईये, जीवन में वेदों के स्वाध्याय एवं वैदिक शिक्षाओं का पालन करने का व्रत लेकर मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान राम के अनुरूप अपने जीवनों को बनाकर अपने जीवन के उद्देश्य को सफल करें। हम सभी आर्यों से श्री राम, श्री कृष्ण और महर्षि दयानन्द सरस्वती से प्रेरणा ग्रहण करने के साथ उनके गुणों को निजी आचरण में धारण करने का अनुरोध करते हैं।

दुःखद सूचना

यह सूचित करते हुए अत्यन्त दु:ख हो रहा है कि श्री सोमदेव जी देहरादून, श्री बद्री प्रसाद गुप्ता, विकासनगर तथा श्रीमती हर्ष मुंजाल नई दिल्ली के आकस्मिक निधन होने से आर्य जगत् की अत्यधिक क्षति हुई है। आर्यसमाज और विशेष रूप से वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के प्रति इनके लगाव और इसके संचालन में इनके द्वारा दिये गये सहयोग के लिए आश्रम का प्रबन्धन और सभी आश्रम वासी इन समस्त दिवंगत आत्माओं के प्रति कृतज्ञ हैं और अन्त:करण से उन्हें अपनी श्रांजलि अर्पित करते हैं। परम पिता परमेश्वर से दिवंगत आत्माओं की शान्ति के लिए प्रार्थना करते हैं।

ई० प्रेम प्रकाश
सचिव, आश्रम

मनुष्य का जीवन विचारों से ही चलता है। यदि विचार अच्छे हैं, तो जीवन अच्छा बनेगा। यदि विचार खराब हैं तो जीवन खराब हो जायेगा।

'लौकी पेय : एक अमृत पेय'

-डा. विनोदचन्द्र विद्यालंकार

(सुविज्ञ पाठकों से अनुरोध हे कि लौकी का प्रयोग करने से पहले कृपया कच्ची लौकी को चख लें, यदि कड़वी लगे तो कृपया प्रयोग न करें क्योंकि ऐसी लौकी जहरीली हो सकती है। अन्य चीजें मिलाने के बाद लौकी का सही स्वाद पता न चलने से सही लौकी का ज्ञान नहीं हो पाता है-सम्पादक)

लगभग तीन वर्ष पूर्व एक दिन प्रातः बैठे-बैठे मुझे गले में कुछ फंसा-फंसा-सा प्रतीत हुआ तथा खड़े होने पर चक्कर से आये। चिकित्सक को बुलाया, उन्होंने सामान्य जांच करने के बाद ई.सी.जी. करवाने का परामर्श दिया। ई.सी.जी. करने पर तीव्र हृदयाघात की पुष्टि हुई और तत्काल गहन चिकित्सा कक्ष में प्रविष्ट कर चिकित्सा आरम्भ कर दी गई। परिवार जनों को बताया गया कि इन्हें रात को किसी समय दर्द रहित हार्ट अटैक पड़ा है। नौ दिन तक चिकित्सा करने के बाद नर्सिंग होम से छुट्टी दे दी गई और नियमित दवाई, परहेज एवं विश्राम का परामर्श दिया गया। दिसम्बर 2000 में टी.एम.टी. करने पर थोड़े से 'ब्लाकेज' की आशंका व्यक्त की गई, जिसकी दवाइयों से ठीक हो जाने की संभावना भी व्यक्त की गई।

इसी बीच मैंने 'नीरोग धाम' पत्रिका में धनौरा मंडी (मुरादाबाद) निवासी श्री विनोद कुमार अग्रवाल का एक लेख पढ़ा। जिसमें ''हृदय-रोग का अचूक नुस्खा लौकी पेय'' का विवरण दिया गया था। मैंने फोन पर श्री अग्रवाल से एकाधिक बार संपर्क करना चाहा, पर असफल रहा। मरता क्या न करता मैंने पत्रिका में प्रकाशित लेख के आधार पर दिन में तीन बार की बजाये केवल एक बार लौकी-पेय लेना आरम्भ कर दिया। साथ ही चिकित्सक के परामर्शानुसार नियमित रूप से औषधि-सेवन, परहेज एवं भ्रमण भी चलता रहा। जुलाई 2001 में पुनः टी.एम.टी. हुआ, इस बार चिकित्सक ने कहा कि अब आपको एंजियोग्राफी और उसके बाद बाईपास सर्जरी भी करवानी पड़ सकती है। उनकी इस बात से मैं काफी चिन्तित हो गया।

घर आकर मैंने पुनः श्री विनोद कुमार अग्रवाल से फोन पर वार्ता करने का सफल प्रयास किया, उनसे लगभग 10 मिनट बात हुई। उन्होंने परामर्श दिया कि मैं लौकी-पेय दिन में तीन बार नियमित रूप से लूं और अपनी सभी रिपोर्ट तथा अद्यतन स्थिति का पूरा विवरण बम्बई के के.ई.एम. आई. हॉस्पिटल के सेवानिवृत डीन तथा सेठ जी एस. मेडीकल कालेज के एनाटामी विभाग के प्राध्यापक डा. मनु भाई कोठारी को भेज दूं, जिन्होंने लौकी-पेय को लाभकारी पाया है और जो ऐलोपैथ चिकित्सक होते हुए भी इस पेय को लेने की प्रबल संस्तुति करते हैं। पहले तो मैं उनके सुझाव पर असमंजस की स्थिति में रह गया कि कोई अपरिचित डाक्टर, बिना मरीज के उपस्थित हुए और फीस के बिना कैसे और क्यों परामर्श देने लगा, पर श्री अग्रवाल के बार बार आग्रह को देखते हुए मैं आश्वस्त हो गया और मैंने आदि से तब तक के सभी ई. सी.जी., टी.एम.टी. एवं अन्य जांचों की रिर्पोट, उपचार के पर्चे आदि संपूर्ण विवरण सहित डा. कोठारी को भेज दिया। उन्होंने सारी रिपोर्टों आदि को देख कर मुझे

माचिस की एक तीली पूरे जंगल को जला कर नष्ट कर सकती है। एक गलत विचार पूरे जीवन के स्वप्नों को नष्ट कर सकता है। गलत विचारों को रोकें।

पत्रोत्तर दिया तथा फोन पर भी विस्तृत वार्ता की, जो वास्तव में उनकी महानता का परिचायक है तथा उनका जीवन इस उक्ति का साकार रूप है कि ''कामये दु:खतप्तानां प्राणीनामर्तिनाशनम्'' अर्थात् आधि-व्याधि आदि दु:खों से संतप्त प्राणियों के रोग व संताप दूर हो जायें और सब स्वस्थ जीवन प्राप्त करें, यही मेरी कामना है।

डा. कोठारी के शब्दों में 'आपका इसकरान फ्रेक्शन (EF) 68-72 प्रतिशत तक क्षतिग्रस्त होने के बावजूद भी आप लौकी पेय से ठीक रह सकते हैं।' उन्होंने परामर्श दिया कि लौकी-पेय का सेवन दिन में 2-3 बार करना उचित है, पर हरेक बार वह ताजा ही बनाया जाये। कोई खट्टा नहीं खाना है। उनके मत में लौकी अमृत स्वरूप में ली जाये तो सिर से पैर तक कल्याणकारी है। उसका लिपिड स्तर पर भी असर पड़ता है।

मैं लगभग दो वर्ष से अधिक समय से डा. कोठारी द्वारा संस्तुत विधि-विधान से लौकी-पेय तैयार करके उसका नियमित रूप से तीन बार सेवन कर रहा हूँ। मैं इसके साथ अर्जुन की छाल का चूर्ण भी दिन में दो बार ले रहा हूँ। परिणाम आशानुकूल ही है। रक्तचाप एवं लिपिड प्रोफाइल पूरी तरह से नियंत्रण में है। प्रतिदिन दोनों समय कुल मिला कर 8-10 किलोमीटर तेज गति से धूम भी रहा हूं, जिसमें किसी प्रकार की थकान या अतिरिक्त पसीना नहीं आता है। यह सब लौकी-पेय तथा अर्जुन-चूर्ण का ही सुपरिणाम है, ऐसा मेरा मानना है। ऐलोपैथ डाक्टर भी प्रगति से पूरी तरह संतुष्ट हैं।

यह तो रही मेरी आप बीती। वस्तुत: डा. कोठारी की संस्तुति की सफलता माले गांव निवासी श्री केशरी चन्द्र मेहता के रोगमुक्त होने के साथ ही प्रकाश में आयी। श्री मेहता की तीनों मुख्य रक्त वाहिनियां (आर्टरीज़) लगभग पूरी अवरूद्ध थीं और छोटी रक्तवाहिनियां लगभग 70 प्रतिशत अवरूद्ध थीं। वे अपनी बाईपास सर्जरी करवाने के विषय में परामर्श करने तथा आपरेशन करवाने के लिए डा. कोठारी के पास गये थे। डा. कोठारी ने बाईपास सर्जरी के विरोध में अपना पक्ष प्रस्तुत करते हुए इसे न कराने की सलाह दी। उन्होंने श्री मेहता की चिकित्सा जिस प्रकार की वह आश्चर्यजनक ही नहीं, वरन् इतनी सहज एवं साधारण है कि हर किसी को उस पर विश्वास नहीं होगा। परन्तु उससे श्री मेहता को आशातीत लाभ हुआ। चिकित्सा से पूर्व 5-10 कदम भी नहीं चल पाते थे, सांस फूलने लगती थी, हांफने लगते थे, पर चिकित्सा के बाद वे 10-12 किलोमीटर आराम से चल लेते हैं, कोई कष्ट नहीं, हृदय की धड़कन में किसी प्रकार की वृद्धि, थकावट, हंफनी आदि कुछ नहीं। यह कमाल है डा. कोठारी संस्तुत लौकी पेय का।

लौकी-पेय को बनाने की विधि

250-300 ग्राम कच्ची लौकी को छिलके सहित धोकर कद्दूकस से कस लें। कसी हुई लौकी को मिक्सी-ग्राइन्डर में डालकर या सिलबट्टे पर पीस लें, इसके साथ 7-8 पत्ती तुलसी एवं 5-6 पत्ती पुदीना भी डाल लें। इस तरह पिसी हुई लौकी को पतले कपड़े से छान कर रस निकाल लें। रस की मात्रा 125-150 ग्राम होनी चाहिए, इसमें बराबर का ताजा पानी मिला लें। इस तैयार रस में तीन-चार काली मिर्च का पाउडर तथा एक ग्राम सेंधा नमक मिला कर भोजन के आधा-पौने घंटे बाद प्रात:, दोपहर और रात्रि को तीन बार लें। प्रारम्भ में रस की मात्रा 3-4 दिन तक कम भी ली जा सकती है, बाद में अभ्यास होने पर पूरी मात्रा ही लेनी चाहिए। यह लौकी-पेय हर बार ताजा बनाना होगा।

इस पेय को पीने से पेट के विकार दूर हो जाते

किया हुआ कर्म कभी निष्फल नहीं होता, और सदा तुरन्त फल भी नहीं मिलता। इसलिए अज्ञानी लोग पाप करने से नहीं डरते।

हैं। हो सकता है कि प्रारम्भ में 3-4 दिन तक पेट में कुछ गड़गड़ाहट अनुभव हो तथा एकाध दस्त भी आ जाये। यह स्वाभाविक प्रतिक्रिया है, इससे घबड़ाने या भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। पेट के विकार दूर होते ही सामान्य स्थिति हो जायेगी।

इस लौकी-पेय से रक्तचाप, कोलेस्ट्रोल आदि नियंत्रण में आ जाते हैं। आज के युग में देश की 50-60 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या-आबाल- वृद्ध- रक्तचाप, हृदयरोग से पीड़ित हैं, सैकड़ों-हजारों लोग इस पेय से लाभान्वित हो रहे हैं। ऐसे भी केस प्रकाश में आये हैं जिनमें एंजियोग्रैफी ने आर्टरीज़ में ब्लाकेज होने की पुष्टि की थी, पर लौकी-पेय के नियमित सेवन के बाद पुनः एंजियोग्रैफी कराने पर उसे दूर हुआ पाया गया। इसका विवरण लगभग दो वर्ष पूर्व 'कादम्बिनी' में तथा हाल ही में 'कल्याण' आदि कई अन्य पत्र-पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हुआ था। साथ ही अनेक प्राकृतिक चिकित्सक भी हृदय रोगियों को इस पेय को लेने का परामर्श देते हैं।

लौकी पेय के साथ यदि अर्जुन की छाल का काढ़ा या चूर्ण दिन में दो बार लिया जाये तो 'सोने में सुहागा' सिद्ध हो सकता है, ऐसा हमारा ही नहीं, अन्य रोगियों का भी अनुभव है। पंतनगर में अवरूद्ध आर्टरीज वाले रोगी में अर्जुन की छाल का चूर्ण लेने के बाद दोबारा एंजियोग्रैफी करवाने पर अवरोघ को समाप्त हुआ पाया गया।

श्री विनोद कुमार अग्रवाल ने एक अन्य स्वानुभूत गुणकारी नुस्खा भी बताया है जो हृदय रोग में समान रूप से लाभकारी सिद्ध हुआ है।

मेथी, अर्जुन की छाल, आंवला और टैंटी सब समान मात्रा में लेकर कूट-पीस लें और छान लें। प्रातः शौच आदि से निवृत्त होकर खाली पेट एक चम्मच चूर्ण ताजे पानी से ले लें। इसके एक घंटे तक कुछ खाएं-पियें नहीं। इस नुस्खे के सेवन से रक्त संचार की रूकावट दूर होती है और हृदय को पर्याप्त रक्त मिलने लगता है।

यद्यपि ये सभी प्रयोग निरापद हैं, तथापि इनको लेने से पूर्व अपने चिकित्सक को विश्वास में ले लें तो उपयुक्त रहेगा। आरम्भ में इनके साथ चिकित्सक द्वारा प्रस्तावित दवाइयों का सेवन भी करते रहना चाहिए।

सम्पर्क :-

आर्य वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम, ज्वालापुर (हरिद्वार)

रचनाएं आमंत्रित हैं

रचना, पत्रिका के उद्‌देश्य को ध्यान में रखते हुए संक्षिप्त, सुस्पष्ट और समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने के उद्‌देश्य को ध्यान में रख कर लिखी गयी हो। वेद, उपनिषद, दर्शन, ब्राह्मण ग्रन्थ, सूत्र ग्रन्थ, महापुरुषों की जीवनी आदि के आधार पर 500 से 1500 शब्दों की रचनाएं -लेख, कविता, प्रसंग, जीवनियां आदि अपनी मूल रचनाएं टाइप कराकर या स्पष्ट अक्षरों में स्वहस्त लिखित सम्पादक के नाम से निम्न पते पर क्रुतिदेव 10 / कुन्डली हिन्दी फान्ट में ई-मेल से भेजने का कष्ट करें। रचना को स्वीकृत या अस्वीकृत करने का अधिकार सम्पादक का है। संस्था की वित्तीय सीमाओं के कारण कोई पारिश्रमिक देना सम्भव नहीं होगा।

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

पोस्ट बैग सं०- 67 जी०पी०ओ० देहरादून-248001

Email : kkvaidik@gmail.com

अपने से भूल होने पर, 'अपना बचाव' करने की अपेक्षा अपनी भूल को स्वीकार कर लेने में कम समय लगता है। यही उत्तम है।

'यज्ञाग्नि का चित्त पर प्रभाव'

–महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज

सेठ– यज्ञाग्नि का चित्त पर कैसे प्रभाव पड़ता है ?

प्रभु आश्रित– यज्ञाग्नि से भिन्न-भिन्न प्रकार के रंग निकलते हैं। उन रंगों का चित्त पर प्रभाव पड़ता है। जैसे सूर्य की रश्मियां हरी, नीली, लाल, पीली संसार की रक्षा करती है, वैसे ही अग्नि से निकले रंग भी रक्षा करते हैं। हमें सूर्य की रश्मियां प्रत्यक्ष रूप से तो प्रतीत नहीं होती कि किस प्रकार वे संसार की रक्षा करती हैं, परन्तु जब भिन्न-भिन्न रंग की बोतलों में जल अथवा तेल भरकर सूर्य-किरण चिकित्सक सूर्य के सम्मुख एक लकड़ी के तख्ते पर विधि से रखते हैं, तब वे बोतलें अपने ही रंग की विचित्र रोगनाशक गुण पैदा हो जाता है। जैसे भिन्न-भिन्न रोगों में भिन्न-भिन्न रंग की बोतल से बने जल अथवा तेल का प्रयोग कराकर रोग को दूर करते हैं, ठीक उसी प्रकार यज्ञाग्नि में रूप-रंग औषधियों के अनुसार उत्पन्न होते हैं और रस, गंध, शब्द भी। सोम-पदार्थों का सम्बन्ध क्रोध और लोभ के साथ है। कुत्ता लोभी और क्रोधी होता है। कुत्ते को सोम-पदार्थ नहीं भाते, या नहीं पचते, या वह नहीं खा सकते, जो लोभ और क्रोध को शान्त करने वाले होते हैं।

हां, कुत्ता वही पदार्थ खा सकता है जो प्राणमय, अन्नमय कोष से सम्बन्ध रखते हैं, वह भी चुराकर, अथवा जो बेकार (व्यर्थ) समझे जाकर दिये जाएं। ऐसे ही जो मनुष्य लोभी, लालची, प्रतिज्ञा भंग करने वाला है वह सोम-रसपान अथवा सोमयज्ञ नहीं कर सकता, उसके भाग्य में नहीं होता।

मधु, घृत, दुग्ध, जल सोम-पदार्थ हैं जिनमें अमृत रहता है। धृत-मधु का सम्बन्ध विज्ञानमय कोष से है। जल-दुग्ध का सम्बन्ध अन्नमय, प्राणमय कोष से है। कुत्ते को घृत नहीं पचता, मधु को सूंघकर हट जाता है। ऐसे ही मनोमय कोष से जिन सोम-पदार्थों या सुगन्धित पदार्थों का सम्बन्ध होगा, वे काम और मोह से सम्बन्ध रखते हैं।

मधु की आहुति देने पर, धारा बहाने से जब गोल छत्ते के समान गोलाकार अग्नि-से प्रतीत हों और उसमें मधु-छत्ते के समान छिद्र अथवा कोष्ठक प्रतीत हों, तब समझो विज्ञानमय कोष का विकास हो रहा है और सहस्रारदल-चक्र में प्रवेश हो रहा है। यह ब्रह्मरस की प्राप्ति है।

साम मन्त्र 31 : रंगों का प्रभाव

यज्ञकुण्ड में अग्नि के नाना रंगों पर दृष्टि एकाग्र करने से चित्तवृत्तियों, वासनाओं पर प्रभाव पड़ता है। कुवृत्तियां-कुवासनाएं दूर हो जाती है। रंगों में चित्त के आकर्षण करने की शक्ति स्वाभाविक है। बच्चा जब किसी रंगवाली वस्तु को देखता है तो तत्काल वह आकर्षित हो जाता है। ज्ञानी, ध्यानी, कर्मकाण्डी मनुष्य को अपने-अपने रंग आकर्षित करते हैं। वीर योद्धाओं को अपना रंग प्यारा लगता है। गर्भवती स्त्री के लिए वैद्य कहते है कि जिस प्रकार का बालक उत्पन्न करने की इच्छा हो, उस प्रकार के रंग से गृह को सजाया जाए, उस प्रकार के वस्त्र गृहस्थी पहना करे। यजुर्वेद (अध्याय 17, मं. 58) रंगों से रक्षा की साक्षी देता है:-

सूर्यरश्मिर्हरिकेशः पुरस्तात्सविता ज्योतिरूदयां अजस्रम्।

जो गलतियां कर चुके हैं, उनका तो दंड भोगना ही पड़ेगा। कम से कम इतना तो संकल्प कर ही सकते हैं, कि 'अब और गलतियां नहीं करेंगे।'

तस्य पूशा प्रसवे याति विद्वान्तसम्पश्यन् विश्वा भुवनानि गोपाः।।

अर्थात्–'जो यह सूर्यलोक है उसके प्रकाश में श्वेत और हरी रंग–बिरंगी अनेक किरणें हैं जो सब लोकों की रक्षा करती हैं। इसी से सबकी सब प्रकार से सदा रक्षा होती है, यह जानने योग्य है।'

इसी विषय में मथुरा के मासिक पत्र 'अखण्ड ज्योति' अगस्त 1958 का एक लेख निकला है।

पदार्थों के रंगों से वृत्ति में बदलाव

जटामांसी, माश, तिल की आहुति से जो रंग पैदा होते हैं वे काम–वासनाओं को बदलते हैं।

चावल और जौं क्रोध की वृत्तियों को, मूंग और छोटे अन्न लोभवृत्ति को बदलते हैं।

जो औषधियां जिस रोग के दूर करने में प्रयुक्त होती हैं, जलने से सूक्ष्म रूप होकर वे उन रोगों को दूर करती हैं और जिन कारणों से वह रोग उत्पन्न होता है, उस आध्यात्मिक कारण (वासना) को वे बदल देती हैं। एक औषधि राज्यक्ष्मा को दूर करती है। यह रोग क्रोध से उत्पन्न होता है तो औषधि के जलाने से जो रंग पैदा होगा वह क्रोध–वृत्ति को बदलकर, शान्त करके दया में बदल देगा।

रंगों का प्रभाव

रंगों का प्रभाव मनुष्य के स्वास्थ्य पर पड़ता है, यह बात प्राचीन काल से ज्ञात है। यही कारण है कि हमारे यहां सदा से शुभकार्यो में लाल और पीले रंगों का प्रयोग किया जाता है। नीले तथा काले रंगों को अशुभ माना जाता है। पहनने के वस्त्रों में भी देश–काल का ध्यान रखने से स्वास्थ्य–रक्षा में सहायता मिलती है।

गरम प्रदेशों में श्वेत रंगों का वस्त्र लाभदायक होता है और ठण्डे प्रदेशों में लाल अथवा काला अच्छा समझा जाता है। श्वेत रंग में एक सबसे बड़ा गुण यह है कि यह सूर्य की धूप में से एक शक्तिवर्धक अंश को ग्रहण करके शरीर को लाभ पहुंचाता है। शरद् ऋतु में यदि भीतर का वस्त्र रंगीन हो तो वह शरीर की गरमी को शरीर से बाहर निकलने से रोकता है और इस प्रकार शरीर को शीत से बचाता है। ऊपरी वस्त्र यदि कुछ कालिमा लिये हुए हो तो वह सूर्य की किरणों को सोख लेगा और उनको शरीर में प्रवेश नहीं होने देगा। इससे शरीर सूर्यताप से उत्पन्न होने वाले कई विकारों से बच जाएगा। अति उष्ण देशों में सूर्य ताप की अधिकता से धूप से कारबन इतना निकलता है कि लोगों की त्वचा उसे इतना सोख लेती है कि वह काली पड़ जाती है।

लाल रंग गरम माना गया है और इसका प्रभाव पैरों पर बहुत लाभदायक होता है। पहनने का भीतरी वस्त्र यदि लाल रंग का हो तो शरीर की सुस्ती (आलस्य) को दूर करके काफी स्फूर्ति दे सकता है। पाण्डु वर्णवाले को भी यदि वह नरवस (Nervous, घबरानेवाला) न हो तो लाल रंग का वस्त्र बहुत हितकारी सिद्ध होता है, परन्तु सिर पर लाल वस्त्र का व्यवहार कदापि उचित नहीं। इससे मस्तिष्क तथा आंखों को हानि पहुंचती है।

स्वयं वेद भगवान् इसकी पुष्टि करता है––

धूम्रान् वसन्तायालभते श्वेतान् ग्रीष्माय कृष्णान् वर्षाभ्योऽरूणाञ्छरदे पृषतो हेमन्ताय पिशङ्. गञ्छिशिराय।। (यजु. 24–11)

पदार्थ–जो मनुष्य (वसन्ताय) वसन्तऋतु में सुख के लिए (धूम्रान्) धुमैले पदार्थो के, (ग्रीष्माय) ग्रीश्मऋतु में आनन्द के लिए (श्वेतान्) सफेद रंग के, (वर्षाभ्यः) वर्षाऋतु में कार्य सिद्धि के लिए (कृष्णान्) काले रंग के वा खेती की सिद्धि करने वाले, **(शरदे)** शरदऋतु में सुख के लिए **(अरूणान्)** लाल रंग के **(हेमन्ताय)** हेमन्तऋतु में कार्य साधने के लिए

अनेक बार हम चुनने को बाध्य होते हैं, सही और सरल में से किसे चुनें। सही को चुनें, सरल को नहीं। सही के विरूद्ध सरल, गलत ही होगा।

(पृशतः) मोटे, और **(शिशिराय)** शिशिर ऋतु सम्बन्धी व्यवहार साधन के लिए **(पिशङ्.गान)** लालिमा लिए हुए पीले पदार्थों को **(आ लभते)** अच्छे प्रकार प्राप्त होते हैं, वे निरन्तर सुखी रहते हैं।

भावार्थ- जिस ऋतु में जो पदार्थ इकट्ठे करने वा सेवने योग्य हों, उनको इकट्ठे और उनका सेवन कर, नीरोग होके, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के सिद्ध करने के व्यवहारों का आचरण करें।

जिन लोगों के स्वस्थ शरीर में लाल रंग खूब भरा है, वे यदि लाल रंग का वस्त्र काम में लाएं तो लाभ के स्थान पर हानि की अधिक संभावना है। यदि हृदय उत्तेजित हो अथवा हृदय-धड़कन का रोग हो, तो भी लाल रंग का वस्त्र धारण करने के लिए प्रयोग में न लाना चाहिए। नीला अथवा हल्का नीला रंग ठण्डा माना जाता है और पित्त के रोगों में उसका उपयोग बहुत लाभदायक माना गया है।

जिनकी त्वचा लाल-गरम होकर उभर आती है, तथा वर्मवाले को, नीला वस्त्र ओढ़ना तथा पहनना उत्तम होता है।

पीत वर्ण के वस्त्र भीतर धारण करने से स्नायुमण्डल (Nervous) को लाभ पहुँचता है। जिनको कोष्ठबद्धता की शिकायत रहती हो उनको पीत वस्त्र भीतर पहनना उत्तम माना गया है।

गरमी की ऋतु में छोटे बालकों को दस्त लग जाते हैं। डाक्टरों की अथवा वैदिक चिकित्सा से वे अच्छे नहीं होते तो उस अवस्था में हल्के नीले रंग की शीशी का पानी तुरन्त लाभ पहुंचाता है। गरमी के दस्तों में शिशु प्रायः बहुत रोया करते हैं, आकाशी रंग का जल बराबर देते रहने से बालक को अवश्य आराम होता है। दांत निकलने के बाद बालक को ज्वर और दस्त हो जाते हैं। इसमें आकाशी रंग का जल अनुपम गुणकारी सिद्ध होता है। यदि शिशु का सिर बहुत गरम न हो तो ललाट और सिर पर आकाशी रंग की बोतल का जल लगाएं और उसे बिना पोंछे वायु से धीरे-धीरे सूखने दें।

पीले रंग की बोतल का पानी उन बालकों के लिए बहुत हितकारी है, जिनको दस्त न होता हो, कोष्ठबद्धता होती हो। यह जिगर को सुधारता और साफ शौच लाता है। इससे आलस्य दूर होकर चेतनता आती है। जब तक शौच साफ न आए, तब तक एक-एक घण्टा बाद पीली बोतल का जल पिलाते जाना चाहिए।

रोग का मल आध्यात्मिक शत्रु है

मानव- शरीर को जो दुःख अथवा रोग लगता है, उसकी निवृति के लिए ही प्रभु देव ने औषधि बनाई है जो वैद्य लोग बताते हैं। परन्तु उस रोग अथवा दुःख का कारण कोई-न-कोई पाप, भूल अथवा गलती होती है ''और वह पाप किसी-न-किसी आध्यात्मिक शत्रु काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के वश ही होता है।'' जैसे इन रंग-बिरंगी बोतलों से रोग निवृत होता है, ऐसे ही आध्यात्मिक शत्रुओं की निवृत्ति या शान्ति भी उन रंगों पर एकाग्र वृत्ति से दृष्टि रखने से होती है जो यज्ञाग्नि में पैदा होते हैं। चुनांचि उनके रंग निम्न हैं--

काम का रंग सफेद (श्वेत), क्रोध का लाल, लोभ का हरा, मोह का पीला और अहंकार का नीला है।

यज्ञाग्नि कैसे जलाएं?

यज्ञाग्नि सात्विक भावों से जलाएं। श्रद्धया अग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः।

अर्थात् 'श्रद्धा से अग्नि प्रकाशित की जाती है और श्रद्धा से हवि अर्पण की जाती है।' उन हव्य पदार्थों से जो रंग उत्पन्न होते हैं, वे सात्विक वृत्ति पैदा करने वाले होते हैं। वे तामसिक, राजसिक पाप करने वाले रंगों की जो वासनाओं में उत्पन्न होते हैं, उनको बदल कर सात्विक बना के काम आदि की निवृत्ति करने वाले बन जाते हैं।

ईश्वर के द्वारा न्यायपूर्ण ढंग से रचे हुए इस संसार में केवल मात्र मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है, जो सब प्रकार के दुःखों से पुरूषार्थ करने पर छूट सकता है।

विलायत के डाक्टर गैटिस का कथन है कि एक व्यक्ति क्रोधित हो गया। वह उसके श्वासों को एक बोतल में बन्द करता गया, फिर उस बोतल में देखा तो क्रोध के परमाणुओं का रंग लाल गुलाबी बन गया। उससे उसने एक शूकरनी पर इन्जेक्शन किया तो शूकरनी तुरन्त मर गई। उनका कहना है कि एक घण्टा के क्रोधित श्वास यदि बोतल में लिये जायें और फिर उनसे इंजेक्शन किया जाए तो 20 आदमी मर जाएंगे। ऐसे ही दु:ख, घृणा आदि के समय जो श्वास निकलते हैं उनमें इतनी विशैली रंगीन (भिन्न-भिन्न प्रकार के रंगवाली) गैस होती है कि मनुष्य को बहुत हानि करती है।

आर्य समाज के विश्व रिकार्ड

1. विश्व की प्रथम महिला जिसके नाम पर कोई विश्व प्रसिद्ध संस्थान बना वह माता सरस्वती देवी थी जिसके नाम पर महर्षि दयानन्द के विख्यात अनुयायी महाशय राजपाल ने लाहौर में अपना प्रकाशन संस्थान सरस्वती आश्रम स्थापित किया था।
2 माता लाड कुंवर विश्व की पहली देवी वा महिला थी जो आधुनिक काल में किसी संस्था की प्रधान चुनी गई। यह घटना सन् 1875 की है। यह माता आर्य समाज रेवाड़ी की संस्थापक, प्रधाना और राव युधिष्ठिर सिंह जी की पत्नी थी। तब इंग्लैण्ड में सब पुरूषों को भी वोट का अधिकार नहीं मिला था।
3 संसार में भारत के 6 दर्शन प्रसिद्ध हैं जिनका हिन्दी में भाष्य आचार्य प्रवर उदयवीर शास्त्री ने 'विद्योदय' नाम से किया है। विश्व प्रसिद्ध इस ग्रन्थमाला का नामकरण आचार्य जी ने अपनी पत्नी श्रीमति विद्यादेवी के नाम पर किया। सारे संसार के पुस्तकालयों में यह ग्रन्थमाला पहुंच गई। यह भी अपने प्रकार की विश्व की पहली घटना है।
4 विश्व प्रसिद्ध प्रथम विचारक, नेता तथा साहित्यकार पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय थे जिन्होंने अपनी पत्नी श्रीमति कला देवी की जीवनी लिखी। उनसे पूर्व किसी पति द्वारा अपनी पत्नी की जीवनी लिखने की घटना इतिहास के पन्नों पर अंकित नहीं है।

-प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर

(आप लगभग 300 छोटे-बड़े ग्रन्थों के लेखक हैं)

अत्यावश्यक सूचना

सुविज्ञ पाठकों को विदित हो कि पवमान पत्रिका प्रत्येक मास की 20 तारीख को डाक द्वारा प्रेषित की जाती है। यदि पत्रिका आपको उस माह के अन्तिम दिन तक प्राप्त न हो तो उसकी सूचना निम्न दूरभाष नम्बरों पर अथवा पत्र द्वारा भेज दें। पत्रिका पुन: आपकी सेवा से भेज दी जायेगी। यदि आप अपनी पत्रिका कोरियर से मांगना चाहते है तो लिखित रूप में सूचित करें कि कोरियर पर होने वाला व्यय आप वहन करेंगे।

धन्यवाद

श्री बृजेश गर्ग, मो.: 09410315022
श्री प्रेम प्रकाश जी, मो.: 09412051586
कार्यालय-फोन- 0135-2787001

गलत की अपेक्षा सही को चुनें, प्रसिद्धि की अपेक्षा सत्य को चुनें।
ऐसा करने से हमारा जीवन शुद्ध, पवित्र और महान बनता है।

वृद्धावस्था - ईश्वरीय वरदान अथवा श्राप

-**हरदयाल कटारिया**

ओ३म् तच्चक्षुर्देवहितम् पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत।
पश्येम शरदः शतं, जीवेम शरदः शतं, श्रृणुयाम शरदः शतं,
ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं, भूयश्च शरदः शतात्।।

आजकल कहीं भी जाओ-एक बात की चर्चा सुनने को मिलती है- आतंक-आतंक-केवल आतंक। रेडियो, समाचार पत्र, टी.वी. एवं विभिन्न संगोष्ठियां- सबको इस विषय ने पूरी तरह से घेर रखा है। पन्नों के पन्ने इस विषय पर लिखे जा रहे हैं। समाचार के ये माध्यम, इसकी चर्चा को बड़े चटखारे से पेश कर रहे हैं। लोगों को भयभीत करके तथा अपंग बनाकर अपनी दुकानें बड़े धड़ल्ले से चला रहे हैं। दिन-प्रतिदिन नये-नये कानून पास करने की मांग हो रही है और कड़ी से कड़ी सजा देने की कोशिश। मोटे तौर पर या संक्षिप्त रूप से मैं इस विषय को मानसिक विकृति कहूंगा। यह सच है कि आतंक के कई रूप हैं: शारीरिक, मानसिक और सामाजिक। मेरे इस लेख की विषय वस्तु प्रायः परिभाषित ''आतंक'' से कुछ भिन्न है। मेरा अभिप्राय वृद्धजनों एवं महिलाओं के प्रति होने वाले अत्याचार, हिंसा, शोषण एवं तिरस्कार आदि से है।

आज का युग, भोगवाद का युग है। हर आदमी, अपने जीवन की सफलताओं या असफलताओं को सोने, चांदी, डालर या संसारी शान-शौकत से तुलना करता है। बुजुर्गों और औरतों से यदि उसे अपने दैनिक जीवनयापन में कोई सहायता मिलती है तो वह अपने माता-पिता, बहन-बेटी का आदर करने को तैयार हैं और यदि उसे अपने मां-बाप बहन-भाई, बेटी-बेटे से मदद नहीं मिलती तो वह उनको दूध में मक्खी के समान समझता है। अपने जीवन या परिवार से बाहर धकेलने में कोई शर्म या ग्लानि नहीं होती। बुजुर्गों और महिलाओं के प्रति इतना अभद्र, अमानवीय सुलूक ''आतंकवाद'' नहीं तो और क्या है।

इस समस्या के समाधान हेतु नाना प्रकार के सुझाव पेश किये जाते हैं। कुछ लोग बुजुर्गों के प्रति दुर्व्यवहार को एक जघन्य अपराध मानते हैं और कठोर से कठोर दण्ड की व्यवस्था चाहते हैं। मेरा यह मत है कि ये सभी उपाय अधिक कारगर सिद्ध नहीं होंगे। अपितु पारिवारिक रिश्तों को तहस-नहस कर देंगे। इस भीषण रोग का इलाज हमारे पूर्वजों ने पहले ही बता रखा है, लेकिन हमारा दुर्भाग्य है कि हम ''घर का जोगी जोगड़ा-बाहर का जोगी सिद्ध'' वाली लकीर को पीटते चले जा रहे हैं। कानून या दण्ड संहिता के नियमों के गुलाम बन चुके हैं। मैं जब आठवीं कक्षा का विद्यार्थी था तो मेरे संस्कृत अध्यापक एक श्लोक सुनाया करते थे। इस सरल, लोकप्रिय सार्थक श्लोक की गूंज मेरे कानों में आज भी सुनाई देती है। श्लोक आप भी पढ़ें और विचार करें। इसकी सार्थकता व सार्वभौमिकता।

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धाः,
वृद्धाः न ये न वदन्ति धर्मः,
धर्मः न स यत्र न सत्यमस्ति,
सत्यम् न यत् छलमेनुविद्धम।।

आप अपने साथ हुए छोटे-मोटे अन्याय को ईश्वर के न्याय पर छोड़ दें और कहें- ''कोई बात नहीं।''

श्लोक बहुत ही सरल है, अर्थ समझना कठिन नहीं। अभिप्राय: यह है कि समाज में, परिवार में एवं देश में ज्ञानवान वृद्धजन ही अगुवाई करने योग्य हैं। परिवार समाज व देश का नेतृत्व यदि बुजुर्गों के योग्य हाथों में होगा तो देश, समाज, परिवार सदैव प्रगति पथ पर चलेगा। बुजुर्गों को भी यह आदेश है कि वे सदाचारी, सत्यप्रिय, छल कपट से दूर रहें। यदि बुजुर्गों में ये गुण व्याप्त हैं तो कोई कारण नहीं कि बुजुर्गों का कहीं पर भी अनादर या तिरस्कार हो।

बड़े दु:ख से लिखना पड़ता है कि आज के बुजुर्ग प्राय: इन सभी गुणों से सुशोभित नहीं हैं। हमारे अच्छे जीवन की कसौटी हमारा अपना आचरण ही है। क्या हम सच्चे मन से कह सकते हैं कि मन, वचन, कर्म से हम अपने जीवन की पवित्रता को कायम रख पाये हैं। हम बुजुर्गों की एक कमजोरी है कि हम अपना नाम, समाचार पत्रों में अथवा गली, मुहल्ले की गपशप में सुनना पसन्द करते हैं। प्रात:, सायं, आप पार्कों आदि में घूमने अवश्य जाते होंगे। वहां आपको कैसे दृश्य दिखाई देते हैं? बुजुर्गों की टोलियां, ताश, जुआ खेलते या अश्लील गपबाजी में मशगूल मिलते हैं। वानप्रस्थ या संन्यास आश्रम में पहुंचे बुजुर्गों के लिये ऐसी जीवन शैली वर्जित है। गुस्ताखी की क्षमा चाहूंगा–हमारे वर्तमान बुजुर्गों की ''रामायण'' सास बहू के क्लेश, युवतियों के शान डिजाइन, मां–बेटी की तकरार, भाइयों के बीच के मनमुटाव, आर्थिक टकराव, युवकों के रोमांस आदि की चर्चा से प्रारम्भ होती है। ये सब कड़वे सच हैं। समाज में व्याप्त विकृतियां, कुरीतियां एवं कुण्ठायें हमारे पतन का एक मात्र कारण हैं। परिणाम सामने हैं, समाज में अनादर और तिरस्कार।

जैसा कि मैंने पहले लिखा है कि आज का समाज भोगवाद का शिकार है। सब पैसे के पीछे मर रहे हैं। पैसा आना चाहिये–पाप से या पुण्य से–कोई अन्तर नहीं। बड़े–बड़े साधु, सन्त, आचार्य एवं प्रख्यात बुद्धिजीवी, सब दुनियावी चकाचौंध पर मोहित हैं। आपके पास धन सम्पत्ति है तो बेटा–बेटी, आपको बाप, दादा मानने को तैयार हैं और अगर जेब खाली हैं तो उसे आपसे कोई सरोकार नहीं है। ऐसी परिस्थिति में आपको अपने जीवन की गुजर बसर के लिये स्वयं व्यवस्था करनी होगी। भूखे पेट रहो या बिस्तर में पड़े रहो किसी को आपकी चिन्ता नहीं है। परिवार परम्परा (जिस पर हमें सदैव गर्व था) छिन्न–भिन्न हो रही है। समाज का कोई नियन्त्रण नहीं और प्रशासन ''अंधा, गूंगा व बहरा'' है। हरिद्वार में अस्थि प्रवाह के लिये पूरी गाड़ी भर कर ले जाने को तैयार हैं मगर जीते जी को एक कप पानी का देना कारगुजारी से बाहर है। भारी बोझ है। हमारे समाज की एक नई विडम्बना देखिये। अभी कुछ ही दिनों में पितृपक्ष आने वाला है। हर भारतीय हिन्दू अपने पूर्वजों के नाम पर श्राद्ध आदि की रस्में निभायेगा। जग दिखावे के लिये घर पर पुरोहितों को भोजन वस्त्र दान दक्षिणा भेंट करेगा और समझेगा कि मैंने पूर्वजों के प्रति अपना कर्तव्य निभा दिया है। जीवन भर अपने माता–पिता का अनादर करता रहा और मरने पर उनके निमित्त ब्रह्म भोज देकर सन्तुष्टि चाहता है। आजकल एक नया फैशन आ गया है। अपने बुजुर्गों की पुण्यतिथि के अवसर पर बड़े–बड़े विज्ञापन दिये जाते हैं। उनकी फोटों के लिये धर्मग्रन्थों से मंत्र/लोक उद्धृत किये जाते हैं। मकसद केवल बिरादरी में अपना नाम ऊंचा करना और बताना होता है कि हम अपने पूर्वजों के प्रति बड़ी श्रद्धा रखते हैं। सच्चाई क्या है, यह तो उनका मन ही जानता है।

पिछले दिनों मुझे देश की एक प्रमुख संस्था (जो वृद्धजनों के मूल अधिकारों के लिये कार्यरत है) द्वारा आयोजित संगोष्ठी में भाग लेने का अवसर मिला। उस संगोष्ठी में विचाराधीन सभी पेपरों से केवल एक

बहुत सी वस्तुएं महंगी है, जो हम चाहते हैं। परन्तु वास्तविक सन्तुष्टि देने वाली वस्तुएं बिल्कुल निशुल्क हैं --सेवा, मधुर वाणी, दया, प्रसन्नता, नम्रता आदि।

ही बात का संकेत मिला कि ''आज का बुजुर्ग आयु का ही गुलाम नहीं वह तो दुनियावी जंजीरों में भी जकड़ा है। कितने दुर्भाग्य की बात है। वैदिक परम्परा के अनुसार हम इस संसार में 100 वर्ष का जीवन लेकर आये हैं वह भी निरोगी जीवन की अपेक्षा से। स्वतन्त्र और सफल जीवन की बजाय हम अपंगता का जीवन जीने पर विवश हो गये हैं। ग्रामवासी बुजुर्ग प्रातः उठकर अपने, खेत खलियान में काम करने में गर्व समझता है मगर नगर का वासी बुजुर्ग सुबह-शाम अपने घुटनों व जोड़ों के दर्द में रोता मिलता है। ऐसा भेद क्यों ? कारण-दोनों की जीवन शैली में अन्तर है। एक प्रकृति के निकट है और दूसरा प्रकृति से दूर। हालांकि शहरों में (ग्रामों की अपेक्षा) चिकित्सा सुविधायें और स्वच्छता के अधिक साधन उपलब्ध हैं। इतना होने पर भी हम अपने आपको रोगग्रस्त क्यों बनाये रहते हैं। तनाव, उच्च रक्तचाप, हृदयरोग आदि के रोगी दिन प्रतिदिन बढ़ते जा रहे हैं। उपरोक्त वेदमंत्र के अनुसार हमें अपनी जीवनशैली को सुधारना होगा। अन्यथा भविष्य अंधकारमय है। अपने मन, शरीर को सदैव व्यस्त रखना होगा-केवल अच्छे कार्यों द्वारा। यदि हम अपने मन वचन कर्म से सही जीवन व्यतीत करते हैं तो हमारा जीवन अस्त-व्यस्त नही होगा। स्वाध्याय काफी सहायक सिद्ध होगा।

विनम्र सुझाव : इतनी बड़ी समस्याओं से घिरे मनुष्य के लिये छुटकारा कैसे मिलेगा। यह एक अपरिहार्य प्रश्न है। इस सब का समाधान हमारे पास है। कुटुम्ब प्रणाली के अपंग हो जाने से बुजुर्गों के पास केवल एक ही रास्ता रह जाता है। वृद्धाश्रमों में शरण लेना। पश्चिम की जीवनशैली में ये वृद्धाश्रम काफी सफल रहे हैं और यहां के लोग इनको पसन्द भी करते हैं। मगर क्या हमारे देश में भी यह प्रथा सफल हो पायेगी। मेरा मानना है और सम्भवतः आप भी सहमत होंगे कि यह प्रथा हमारे आश्रमों की मूलभूत विचारधारा है। हमारे देश के बुजुर्ग अपने बच्चों, पोतों के प्रति अधिक मोहवादी हैं। वे नाती-पोतों के सहारे सारा जीवन बिता सकते हैं। देहाती कहावत है कि बनिये को मूलधन से ब्याज अधिक प्यारा लगता है। ठीक इसी तरह हमारे बुजुर्ग, अपने बेटों के दुर्व्यवहार के बावजूद अपने नाती-पोतों के साथ रहने में कोई कठिनाई महसूस नहीं करते। उनकी आत्मा इन मासूम बच्चों में बसी होती है। अतः यह प्रथा हमारे देश में सफल नहीं होगी, इसका एक मूलभूत कारण है। ओल्ड एज होम, दो प्रकार के हैं, कुछ सरकार द्वारा स्थापित किये गये हैं और कुछ प्राइवेट व्यापारिक घरानों द्वारा। सरकारी वृद्ध गृह बहुत ही भीड़भाड़ वाले भद्दे और मूलभूत आवश्यकताओं से नगण्य। प्राइवेट वृद्धगृह बहुत मंहगे और आडम्बरपूर्ण होते हैं। आम भारतीय बजुर्ग इनमें प्रवेश ही नहीं पा सकता। ये संस्थान केवल लाभ कमाने के लिये स्थापित किये जा रहे हैं। वानप्रस्थ अथवा संन्यास आश्रम के सिद्धान्तों के विपरीत। हमारी वर्ण एवं आश्रम व्यवस्था में इसका समाधान बड़े सरल रूप से बताया गया है। मगर आज के युग में इसकी सफलता पर प्रश्नचिन्ह लग गया है। कारण- हम आजकल सुख-सुविधाओं के गुंलाम हैं। रेडियो, टीवी, फ्रिज, एसी, गाड़ी, फोन। सबसे सरल उपाय यह है कि हम अपने परिवार में ही रहकर वानप्रस्थ आश्रम के नियमों के अनुसार अपना जीवन बितायें। अपने आपको सदा सामाजिक कार्यों में व्यस्त रखें। परोपकार ही जीवन का रस है। इस धारणा को अपने मन में डाल लें तो हमारा बुढ़ापा बहुत सरलता से बीत जायेगा। जियो और जीने दो के मन्त्र को अपने जीवन का लक्ष्य बना लें और निजी कुण्ठाओं या

दूसरों के गुण देखें। यदि आप सबमें ही दोष देखेंगे, तो किसी के भी साथ नहीं रह पाएंगे। जिनके साथ रहते हैं, उनके गुण देखें, दोष नहीं।

अंहकार से विमुक्त हो जायें तो बुढ़ापा सुखदायी सिद्ध होगा। परमपिता ने दीर्घायु हमें वरदान के रूप में प्रदान की है। इसे हम अपनी त्रुटियों या भ्रान्तियों से ''श्राप'' न समझें। अपनी अभिव्यक्ति के निखार के लिये दूसरों पर स्नेह भरा वरद्हस्त रखें। परमात्मा करूणासिंधु है। अपने जीवन की हर सांस का उसके अनुरूप बनाने की चेष्टा करें। आपका जीवन भी सुखमय होगा और समाज, देश और विश्व सदा आपका आभारी रहेगा। अपने पीछे धन छोड़ सको या न छोड़ सको, पर अच्छे संस्कार अवश्य छोड़ कर जाओं। इसको अपने जीवन का मूल मंत्र समझें–संसार आपका अनुसरण करेगा। खाली हाथ आये थे खाली हाथ जाना है मगर आपके शुभ कर्म सदैव ज्योतिस्तम्भ बने रहेंगे। परमपिता परमात्मा ने मनुष्य जन्म दिया है उसे दूषित न होने दें। आप सबका जीवन आनन्दमयी हो–इसी आशा के साथ।

ओं भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं
पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरंगैस्तुष्टवां सस्तनूभिर्व्यशेमहि देव हितं
यदायुः।।

प्रभु आदि सृष्टि में ऋषियों के हृदय में ज्ञान का प्रकाश कैसे करता है?

प्रभु ने आदि सृष्टि में ऋषियों के हृदय में ऐसे ही ज्ञान का प्रकाश किया जैसे वह आज करता है। आप नमक की बोरी कहीं रखिये। एक भी चींटी कभी उसके पास नहीं आती परन्तु कटोरी में थोड़ी खाण्ड कहीं रख दो। झट से एक के पीछे दूसरी और दूसरी के पीछे तीसरी सब चींटियां पंक्तिबद्ध खाण्ड के पास पहुंच जाती हैं। मनुष्य नमक और खाण्ड को चखकर जानता है कि यह क्या हैं परन्तु, अनपढ़ चींटियों को किसने यह ज्ञान दिया कि यह नमक है और यह खाण्ड है? सब मूक प्राणियों को जन्म देते ही जीवन के निर्वाह के लिए आज भी सर्वव्यापक प्रभु आवश्यक ज्ञान देता है। मधुमक्खी को मधु बनाना उसी ने सिखाया है। मनुष्यों को सृष्टि के आदि में अपना नित्य अनादि ज्ञान वह प्रभु ऋषियों के हृदय में वैसे ही प्रकाशित करता है।

–स्वामी डा. सत्य प्रकाश सरस्वती

व्यर्थ में इच्छाएं न बढ़ाएं, यदि आपकी आवश्यकताएं पूरी हो चुकी हैं।
याद रखें–आवश्यकताएं पूरी हो सकती हैं, इच्छाएं नहीं।

J)katfy

^ofnd /ke&n'ku&lLdfr d i dk.M vkpk; iŒ jktohj 'kkL=h ugh jg*

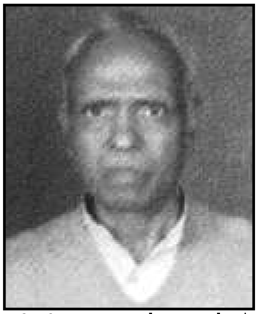

ofnd /ke&n"ku&lLdfr&lkfgR; d i dk.M if.Mr] ifl) o;kdj.k] mPpdksfV d fopkjd ,o fl)gLr y[kd ije vknj.kh; Jh jktohj "kkL=h th ugh jgA cgLifrokj] fnukd 25 flrEcj] 2014 dk ikr% mudk ekuhuxj] mRrj in'k e dkQh le; l :X.k jgu d ckn fu/ku gk x;kA if.Mr th dk tUe mRrj in"k xkft;kckn e.My d xke Qtyx< d ,d vk; ifjokj e] firkJh f"kopj.k nkl ,o ekrk Jherh eulk noh d xg e fnukd 4 viy lu 1938 dk gvk FkkA bl le; mudh vk; 76 o"kk dh FkhA

i- jktohj "kkL=h dh ikjfEHkd f"k{kk viu tUe LFkku d ,d xke.k fo|ky; e lEiUu gbZ FkhA bld Ik"pkr vkidk onkFk fo|k d v/;;u gr lu 1946 e x:dy cdykuk] ejB ¼mRrj in"k½ e ifo"V djk;k x;kA ogk l dN le; d ckn vki on fo|ky; x:dy] xkreuxj] ub fnYyh e v/;;ukFk vk;A vkid firkJh Hkh blh lLFkk e lokjr FkA vkidh d"kkx cf) dk n[kr g, dN le; d Ik"pkr vkidk ofnd&/ke&/ot&okgd] ifl) ,frg;fon iT;ikn vkpk; Hkxokuno Tkh ¼Lokeh vkekuUn th ljLorh½ }kjk lpkfyr x:dy egkfo|ky;] >Ttj e ifo"V fd;k x;k tgk vkiu ij euk;kx l lu 1954 rd on&onkxk dk xgu v/;;u fd;kA bl dky e ijh{kk u ndj fo}rk mikftu gr vkiu ijEijkxr v/;;u fd;k FkkA

bld Ik"pkr vkiu lelkef;d ifjfLFkfr ,o vko";drk d vulkj itkc fo"ofo|ky; e fof/kor ijh{kk mRrh.k djr g, fo"kkjn] "kkL=h rFkk iHkkdj dh mikf/k;k ikIr dhA bl idkj ijEijkxr v/kh"kkL= rFkk vk/kfud ijh{kk i.kkyh nkuk e ifji.k gku ij vkiu lu 1958 l 1960 rd x:dy >Ttj e v/;kiu dk; fd;kA vki itkc d f"k{kk foHkkx e lu 1960 l 1967 rd lLdr v/;kid d in ij dk;jr jgA okjk.klu; lLdr fo"ofo|ky; l vkpk; rFkk ejB fo"ofo|ky; l ,e-,- lLÑr dh ijh{kk mRrh.k dhA

vkiu xke cjh] ftyk >Ttj ¼gfj;k.kk½ e "kkldh; fo|ky; e v/;kiu dk; djr g, vk"k xUFkk d v/;kiu gr vfrfjDr le; fudkydj vkpk; cyno th ,o bUnno e/kkFkh dk 0;kdj.k egkHkk"; vkfn i<k;kA rnijkUr vki lu 1967 l fnYyh i"kklu e lLÑr f"k{kd dk dk; djr g, lu 1998 e lokfuoRr g,A vki 0;kdj.k "kkL= d ryLi"kh fo}ku Jh fo"ofi; th d ;kX;re f"k"; jg gA vkidk vud lLFkkvk u 0;kdj.k v/;kiukFk vkefU=r djd Kkuktu fd;k ftue dU;k x:dy ujyk] x:dy xkreuxj] fnYyh ,o x:dy ik/kk] ngjknu e[; gA

vkidh fo}rk prfnd QYh gA vkidh fuck/k y[kuh l vud xUFkk dk y[ku ,o lEiknu gvk g] ftue ;kxn"ku&Hkk";e] ofnd "kCndk"k] mifu"knHkk";] vkfn xUFkk dk y[ku rFkk vk; txr dh ifl) if=dk ^^n;kuUn lUn"k** dk lEiknu gvk g] ftld lf"V lor] ofnd eukfoKku] thokRe&T;kfr] e;knk i:"kkRre Jhjke] ;kx"oj JhÑ".k ,o lR;kFk idk"k vkfn fo"k"kkd vfr i"kluh; gA

vkidh fo}rk ,o fof"k"V dk; dk n[kr g, vud ifl) lLFkkvk u vkidk lEekfur fd;k g ftle lu 2000 e foØe ifr"Bku l;Dr jkT; vefjdk] lu 2002 e vk; lekt lkUrkØt] eEcb] lu 2007 e x:dy >Ttj }kjk Lokeh vkekuUn Lefr ijLdkj rFkk ekuo lok ifr"Bku] fnYyh }kjk inRr lEeku ie[k gA

;|fi i- jktohj "kkL=h vc gekj e/; e ugh g] rFkkfi mUgku egf"k n;kuUn d v/kj dk; dk ijk dju d fy, fu"dke Hkko l tk i:"kkFk o lkfgR; lk/kuk dh g mlI ;x&;xkUrjk rd ofnd /ke ieh ykx ij.kk xg.k dj ykHkkfUor gkr jgx vkj egf"k n;kuUn vkj if.Mr jktohj "kkL=h th d Loluk dk lkdkj djxA ofnd lk/ku vkJe d lHkh vf/kdkjh ,o lnL;x.k mUg viuh gkfnd J)katfy iLrr djr g vkj mudh ifjokj d ifr viuh lgkuHkfr ,o lonuk 0;Dr djr gA b"oj fnoxr vkRek dk fpj "kkfUr vkj ek{k inku dj] ;g ikFkuk gA

&ofnd lk/ku vkJe] rikou] ngjknu

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून का वातावरण यज्ञमय है तथा चारों ओर घने वृक्षों की छाया है। आश्रम के वनाच्छादित क्षेत्र को अधिक सुरम्य एंव उपयोगी बनाने की दृष्टि से अगस्त तथा सितम्बर माह में सघन कार्यक्रम संचालित किया गया। तपोभूमि में कागजी नींबू के 500 पौधे लगाये गये तथा कुछ आम, दालचीनी, बेल, तेज–पात, इमली और कटहल आदि के पौधे भी रोपित किये गये। आशा है कि तीन वर्ष बाद नींबू की अच्छी फसल मिलने लगेगी जिससे आश्रम की आर्थिक स्थिति में सुधार होगा।

आश्रम की गोसाला में रैड सिन्धी नसल की तीन देशी गाये सम्मिलित की गई हैं और प्रयास किया जा रहा है कि भविष्य में केवल देशी नसल की गायें ही गोसाला में पाली जायें। वृक्षारोपण कार्यक्रम तथा गोसाला की व्यवस्था में श्री प्रदीप दासा जी, चारटर्ड एकाउन्टेंट का मुख्य योगदान है। इसके लिए हम उनका हृदय से आभार व्यक्त करते हैं। आश्रम के शुभ चिन्तक श्री इन्द्र देव गुप्ता जी यज्ञ आदि के लिए प्रति माह रु15000/– दान देते हैं, हम उनके भी अत्यधिक आभारी हैं।

आप अवगत हैं कि आश्रम द्वारा तपोवन आरोग्य धाम तथा महात्मा आश्रित जी सत्संग भवन का निर्माण कराया जा रहा है। उपरोक्त कार्यों के निमित्त दान देने वाले सज्जनों एवं संस्थाओं के नाम निम्नलिखित हैं–

नाम	पता	धनराशि (रुपये)	उद्देश्य
श्री रामभज मदान	नई दिल्ली	7800000/–	भवन निर्माण
श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री	नई दिल्ली	1500000/–	भवन निर्माण
श्री राजा राम नागर	रुद्रपुर	50000/–	भवन निर्माण
माता लाजवन्ती जी	तपोवन आश्रम	20000/–	भवन निर्माण
माता कृष्णा सप्रा जी	नई दिल्ली	300000/–	भवन निर्माण
श्री श्याम सुन्दर सोनी	गुड़गांव	250000/–	भवन निर्माण
श्री अनिल मलिक	नई दिल्ली	25000/–	भवन निर्माण
श्री दीप चन्द गोयल	कीरतपुर बिजनौर	100000/–	भवन निर्माण
श्री योगराज अरोड़ा	नई दिल्ली	350000/–	भवन निर्माण
श्रीमती सुनीता बुद्धिराजा	नई दिल्ली	50000/–	भवन निर्माण
श्री विनेश कुमार आहूजा	नई दिल्ली	21000/–	भवन निर्माण
श्री ज्ञान चन्द्र अरोड़ा	तपोवन आश्रम	20000/–	भवन निर्माण
श्री योगेश मुंजाल	नई दिल्ली	100000/–	भवन निर्माण
डा० राधेश्याम आर्य	हरियाणा	10000/–	भवन निर्माण
श्री प्रेम प्रकाश शर्मा	देहरादून	11000/–	भवन निर्माण
डा० शशि वर्मा	फरीदाबाद	52000/–	भवन निर्माण
श्री ओम प्रकाश अग्रवाल	देहरादून	400000/–	भवन निर्माण

दूसरों से जलन और व्यर्थ आशाएं यदि ये दो चीजें हम छोड़ दें,
तो बहुत आनंद से जीवन को जी सकते हैं। जीवन को सदा आनंद से जिएं।

श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा जी द्वारा एकत्रित	देहरादून	160000/-	भवन निर्माण
आचार्य आशीष जी द्वारा एकत्रित	तपोवन आश्रम	560000/-	भवन निर्माण
गुप्त दान - -		250000/-	भवन निर्माण

सभी दान दाताओं का नाम उनकी इच्छा के अनुसार शिला पट्ट पर लिखवाया जायेगा। सभी महानुभावों से प्रार्थना है कि तपोवन आश्रम देहरादून के निर्माणाधीन भवनों, गोशाला, यज्ञशाला, भोजनालय तथा विद्यालय के सहायतार्थ अपनी पवित्र कमाई में से दान देकर पुण्य के भागी बनें।

ई० प्रेम प्रकाश शर्मा
सचिव, आश्रम

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून द्वारा आगामी माहों में आयोजित किये जाने वाले कार्यक्रम-

कार्यक्रम का नाम	अवधि	संयोजक
1- शरदुत्सव	08.10.14 से 12.10.14 तक	वैदिक साधन आश्रम तपोवन
2- कायाकल्प शिविर	13.10.14 से 20.10.14 तक	योगाचार्य डा० विनोद कुमार शर्मा
3- योग शिविर-प्रथम स्तर	01.11.14 से 09.11.14 तक	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
4- आर्य युवक युवती महा सम्मेलन	22.11014 से 23.11.14 तक	आर्य प्रतिनिधि सभा उाराखण्ड
5- योग सिविर-द्वितीय स्तर	23.11.14 से 04.12.14 तक	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य

ई० प्रेम प्रकाश शर्मा
सचिव, आश्रम

गुरुकुल यमुनातट मंझावली, फरीदाबाद, हरियाणा में शनिवार 4, अक्टूबर 2014 से रविवार, 5 मार्च, 2015 तक सवा करोड़ गायत्री तथा चतुर्वेद ब्रह्मपारायण महायज्ञ एवं योग साधना शिविर विशिष्ठ आयोजनों के साथ सम्पन्न होंगें। कार्यक्रम के बारे में और अधिक जानकारी के लिए गुरुकुल के संस्थापक महोदय के मोबाइल सं० 09868855155 अथवा आचार्य जी के मोबाइल सं० 09718579333 पर सम्पर्क किया जा सकता है।

आयोजक
स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती
मोबाइल सं० 09410102568

व्यक्ति को न छोड़े, धन आदि छोड़ दें। धन आदि के लिए व्यक्ति से संबंध तोड़ना अच्छा नहीं है। धन से व्यक्ति अधिक मूल्यवान है।